अध्याय – 1

प्रस्तावना

भारतीय संविधान सभा तथा संविधान निर्माण

संविधान निर्माण की सर्वप्रथम मांग बाल गंगाधर तिलक द्वारा 1895 में "स्वराज विधेयक" द्वारा की गई। 1916 में होमरूल लीग आन्दोलन चलाया गया। जिसमें घरेलू शासन सचांलन की मांग अंग्रेजों से की गई। 1922 में गांधी जी ने संविधान सभा और संविधान निर्माण की मांग प्रबलतम तरीके से की और कहा- कि जब भी भारत को स्वाधीनता मिलेगी भारतीय संविधान का निर्माण -भारतीय लोगों की इच्छाओं के अनुकुल किया जाएगा। अगस्त 1928 में नेहरू रिपोर्ट बनाई गई। जिसकी अध्यक्षता पं. मोतीलाल नेहरू ने की। इसका निर्माण बम्बई में किया गया।

इसके अन्तर्गत ब्रिटिश भारत का पहला लिखित संविधान बनाया गया। जिसमें मौलिक अधिकारों अल्पसंख्यकों के अधिकारों तथा अखिल भारतीय संघ एवम् डोमिनियम स्टेट के प्रावधान रखे गए। इसका सबसे प्रबलतम विरोध मुस्लिम लीग और रियासतों के राजाओं द्वारा किया गया। 1929 में जवाहर लाला नेहरू की अध्यक्षता में कांग्रेस का लाहौर सम्मेलन हुआ। जिसमें पूर्ण स्वराज्य की मांग की गई।

1936 में कांग्रेस का फैजलपुर सम्मेलन आयोजित किया गया। जिसमें कांग्रेस के मंच से पहली बार चुनी हुई संविधान सभा द्वारा संविधान निर्माण की मांग की गई। मार्च 1942 में दुसरे विश्व युद्ध से उपजी परिस्थितियों के उपरान्त क्रिप्स मिशन को भारत भेजा गया। जो एक सदस्य का था। इसने युद्ध के बाद भारत में उत्तरदायी शासन की मांग को स्वीकार करने का वचन दिया। लेकिन यहां भी 'डोमिनियम स्टेट' अवधारणा रखी गई। जिसे कांग्रेस लीग और गांधीजी ने नामंजूर कर दिया। गांधीजी ने इस मिशन को 'पोस्ट डेटेड चैक' की संज्ञा दी ।अर्थात अंग्रेज एक ऐसा दिवालिया बैंक है जो भविष्य में कभी भी फेल हो सकता है।

भारत में शासन की अव्यवस्था को देखते हुए तत्कालिन वायसराय लार्ड वेवल ने जून 1945 में शिमला में सर्वदलीय बैठक बुलायी जो किसी भी तार्किक नतीजे पर नहीं पहुंची। इस सम्मेलन को 'शिमला सम्मेलन' या वेवल योजना के नाम से जाना जाता है। मार्च 1946 में केबिनेट मिशन भारत भेजा गया। जिसकी अध्यक्षता 'सर पैथिक लारेन्स' ने की तथा दो अन्य सदस्य सर स्टेफर्ड क्रिम्स और ए. वी. अलेक्जेण्डर थे।

इस आयोग द्वारा तत्कालीन समय में शासन का सही निर्धारण करने का प्रयास किया गया। इसकी सिफारिशों के आधार पर संविधान सभा की रचना की गई जो निम्न प्रकार है-

संविधान सभा में कुद सदस्य संख्या 389 निर्धारित की गई

i. ब्रिटिश भारत से -292 सदस्य
ii. चीफ कमीशनरी से - 4 सदस्य
iii. देशी रियासतों से - 93 सदस्य रखे गये।
iv. ब्रिटीश भारत और चीफ कमिश्नरी क्षेत्रों से सदस्यों का निर्वाचन किया गया।
v. प्रत्येक 10 लाख की जनसंख्या पर 1 सदस्य को चुना जाएगा।
vi. सदस्यों को 3 भागों में बांटा गया: (1) सामान्य (2) मुस्लिम (3) सिख (पंजाब)
vii. पृथक पाकिस्तान की मांग को नामंजूर कर दिया।

इसी आयोग की सिफारिशों के आधार पर जुलाई 1946 में चुनाव सम्पन्न कराए गए। जिसमें कांग्रेस ने 208 सीटें तथा मुस्लिम लीग 73 तथा अन्य 15 सीटें जीते।

इसी के आधार पर अंतरिम सरकार का गठन 1946 में किया गया। जिसमें 2 सितम्बर 1946 से कार्य करना प्रारम्भ किया जिसमें मुस्लिम लीग ने भाग नहीं लिया। इस सरकार का अध्यक्ष तत्कालीन वायसराय लार्ड वेवल था। तथा उपाध्यक्ष पं. जवाहर लाल नेहरू थे। इस सरकार ने सदस्य संख्या नेहरू सहित 14 रखी गई। 26 अक्टूबर 1946 को इस सरकार का पुर्नगठन किया गया। लीन ने 5 प्रतिनिधि इसमें शामिल किए गए।

मार्च 1947 में माउण्टबेटन भारत के वायसराय बने। इन्होंने 3 जुन 1947 को एक योजना प्रस्तुत की जिसे विभाजन/ माउण्टबेटन/ जून योजना के नाम से जाना जाता है। इसे 18 जुलाई 1947 को ब्रिटेन के राजा ने पास कर दिया। इस योजना की क्रियान्विती 15 अगस्त 1947 के भारत स्वतंन्त्रता अधिनियम में हुई। इसके निम्न प्रावधान थे-

भारत को 2 डोमिनियम स्टेटों में बांटा गया-

(1) भारत (2) पाकिस्तान

भारत का शासन जब तक संविधान का निर्माण पुर्ण न हो तब तक 1935 के भारत शासन अधिनियम से चलाना तय किया गया। संविधान सभा को सम्प्रभूता की स्थिति प्राप्त हो गई। भारत का वायसराय माउण्टबेटन बना रहा। लेकिन पाकिस्तान में गर्वनर जनरल या वायसराय मोहम्मद अली जिन्ना बनें। विभाजन के बाद संविधान सभा का पुनर्गठन किया गया। 9 दिसम्बर 1946 को संविधान सभा की पहली बैठक हुई। जिसमें अस्थायी अध्यक्ष सच्चिदानन्द सिन्हा को बनाया गया।

दुसरी बैठक 11 दिसम्बर 1946 को हुई। जिसमें स्थायी अध्यक्ष डा. राजेन्द्र प्रसाद को बनाया गया। इसी बैठक में उपाध्यक्ष एच. सी. मुखर्जी थे तथा सवैधानिक सलाहकार बी. एन. राव थे।

तीसरी बैठक 13 दिसम्बर 1946 को बुलाई गई, जिसमें नेहरू जी द्वारा 'उद्देश्य प्रस्ताव' पेश किया गया। जिसे संविधान सभा ने 22 जनवरी 1947 को अपना लिया। इन्ही उद्देश्य प्रस्तावों के आधार पर भारतीय संविधान की प्रस्तावना निर्मित की गई।

संविधान सभा में पहली बैठक के अन्तर्गत 207 सदस्यों ने भाग लिया। संविधान सभा में कुल 15 महिलाओं ने भाग लिया। तथा 8 महिलाओं ने संविधान पर हस्ताक्षर किए। 15 अगस्त 1947 को भारत विभाजन उपरान्त संविधान सभा में सदस्य संख्या घटकर 324 रह गई। अक्टुबर 1947 को संविधान सभा में सदस्य संख्या घटकर 299 रह गई।

संविधान सभा द्वारा संविधान के कुल 3 वाचन सम्पन्न किए गए। अन्तिम वाचन 17 नवम्बर 1949 से 26 नवम्बर 1949 तक कुल बैठके 105 तथा 12 अधिवेशन सम्पन्न किए गए। भारत विभाजन से पूर्व 4 अधिवेशन सम्पन्न किए गए। 7 वें अधिवेशन में महात्मा गांधी को श्रद्वांजली अर्पित कि गई। मई 1949 में भारत ने राष्ट्रमण्डल की सदस्यता ग्रहण करना सुनिश्चित किया। भारतीय संविधान सहमति और समायोजन के आधार पर बनाया गया है। भारतीय संविधान सभा ने दो प्रकार से कार्य किया।

(1) जब संविधान निर्माण का कार्य किया जाता तो इसकी अध्यक्षता राजेन्द्र प्रसाद करते तथा

(2) जब संविधान सभा विधायिका के रूप में कार्य करती है तो अध्यक्षता गणेश वासुदेव मावंलकर द्वारा की जाती।

संविधान सभा की अंतिम बैठक संविधान निर्माण हेतु 24 नवम्बर 1949 को आयोजित की गई। इस दिन 284 लोगों ने संविधान पर हस्ताक्षर किए।

भारतीय संविधान गांधी और नेहरू

संविधान पर हस्ताक्षर करने वाला पहला व्यक्ति जवाहर लाल नेहरू थे। सम्पुर्ण संविधान 26 जनवरी 1950 को लागू किया गया। लेकिन लागु करने से पूर्व 24 जनवरी 1950 को अन्तिम बैठक बुलाई गई। जिसमें डा. राजेन्द्र प्रसाद को भारत का राष्ट्रपति चुना गया तथा राष्ट्रीय गीत और राष्ट्रगान को अपनाया गया।[1]

भारतीय संविधान भारतीयों के लिए एक जीवन रेखा की तरह है। संविधान को लेकर निर्माण के समय और संविधान के बाद आज भी कई सारे मिथक मौजूद है। जिसमें पराधीन भारत और स्वाधीन भारतीय संविधान पर कुछ विचार रखे जाते हैं। भारतीय संविधान के स्वरुप व स्वाधीन भारत के भविष्य के संबंध में विचार रखे जाते है। पराधीन भारत में किस प्रकर से आन्दोलन चलाये जायेंगे, आन्दोलन कहाँ से चले जायेंगे इन सब का निर्णय माहात्मा गांधी करते थे। जब भारत स्वाधीन हुआ तब जवाहर लाल नेहरू उनके उत्तराधिकारी के रूप में राजनीति और राष्ट्रीय नीति में सक्रिय हो गए।

भारतीय राजनीति में कईयों के द्वारा यह आरोप लगाया जाता है कि भारत में जिस प्रकार की आजादी महात्मा गांधी चाहते थे ठीक उसी के विपरीत नेहरू ने अपनी नीति को क्रियान्वित किया। इसके सन्दर्भ में उदहारण प्रस्तुत किया जाता है कि तीव्र भौतिकवाद का प्रसार, बड़े उद्योग की बढ़ती सीमाएं जिसने लघु और कुटीर उद्योग को रसातल में ले गया, विकास का केंद्र गांवों के बजाय नगरों का होना स्पष्ट करता है कि अभी भारत में गांधीवादी स्वाधीनता नहीं प्राप्त हुई है। इसलिए नेहरू और भारतीय संविधान पर आरोप लगाया जाता ही इन्होने गांधीवादी मूल्यों को दरकिनार किया है।

यह विचार हमेशा चर्चा में रहता है कि नेहरू ने अपनी नीति से भारत के नीति में गांधी के मूल्यों को अप्रसांगिक कर दिया है। जिस प्रकार का संविधान निर्माण किया गया है उसमे कहीं भी गांधीवादी दर्शन का समावेश नहीं किया गया है। इस प्रकार के आरोप में कुछ तो सत्यता है पर यह अंतिम सत्य है, यह स्वीकार करना

[1] http://rajasthangyan.com/notes_explain.jsp?tid=2&nid=2

कठिन है। भारतीय संविधान में आवश्यकता के अनुसार गांधीवादी मूल्यों को भी स्थान दिया गया है। क्योंकि संविधान में कुछ ऐसे अनुच्छेद मिलते है जिसमें पूर्ण गांधीवादी मूल्यों की छाप है। संविधान और विकास की नीतियों में गांधी के मूल्यों को आत्मसात किया गया है जिससे गांधीवादी विचारों से प्रेरणा लेते हुए सर्वोदय की धारणा को आज भी जीवंत रखा गया है।

गांधी जी और मूल अधिकार

भारतीय संविधान में गांधी के मूल्य बहुत से अनुच्छेद और संविधान के प्रस्तावना में दिखाई देता है। महात्मा गांधी के मूल्यों में हम पाते हैं कि वे हमेशा ही दलितों और गरीबों के लिए खड़े दिख जाते हैं। गांधी जी ने ही दलितों को 'हरिजन' शब्द से संबोधित किया और उन्होंने दलितों को मुख्य धारा में लाने और उन्हें सम्मान दिलाने के लिए सामजिक प्रयास किये हैं।

भारतीय संविधान सभा ने गांधी जी के इसी मूल्यों को संविधान में स्थान दिया। दलितों का साथ देने के लिए अम्बेडकर ने पूरा जीवन लगा दिया। नागरिकों को भारतीय संविधान में समता का अधिकार दिया गया है। यह समता का अधिकार गांधी जी के मूल्यों एक हिस्सा है जिसे संविधान में शामिल किया गया है। गांधी जी को इन्हीं विचारों और मूल्यों के कारण इन्हें राष्ट्रीय आन्दोलनकर्ता के साथ-साथ समाज सुधारक भी कहा जाता है।

समता का अधिकार संविधान के भाग-4 के अनुच्छेद 14 से 18 के मध्य व्याख्यायित है। इसमें स्पष्ट कहा गया है कि भारतीय संविधान और राज्य किसी को अपने समक्ष सामान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा। इसी प्रकार की समानता के लिए अनुच्छेद-15 में कहा गया है कि राज्य केवल धर्म, लिंग, मूलवंश, जन्मस्थान और जाति के आधार पर विभेद नहीं करेगा। इसी प्रकार की समानता के लिए गांधी के मूल्यों का प्रयोग करके यह कहा जाता है कि किसी सार्वजनिक समागम स्थल पर कोई विभेद नहीं किया जाएगा। महात्मा गांधी अस्पृश्यता के धुर विरोधी थे। वे अस्पृश्यता को भारत का लाइलाज रोग मानते थे। वे स्वाधीन भारत में किसी प्रकार का उंच-नीच भावना को नहीं देखना चाहते थे। उनका मानना था कि किसी भी देश का पैमाना वहाँ के दबे कुचले लोग होना चाहिए।

किसी राज्य का चरित्र देखने के लिए वहाँ की संपत्ति और सभ्यता को देखकर नहीं अपितु वह के गरीब और कमजोरों को पैमाना बनाकर की स्थिति को जानना चाहिए। इस संबंध में उनका कथन है कि, "अस्पृश्यता-

निवारण को व्रत की जगह देकर जाहिर करते हैं कि अछुतपन हिन्दू धर्म का अंग नहीं है, इतना ही नहीं बल्कि यह हिन्दू धर्म में पैठी एक सड़न है, बहम है, पाप है, और इसे मिटाना हर धर्म है, उसका परम कर्तव्य है।"[2]

भारतीय संविधान में स्वतंत्रता का अधिकार महात्मा गांधी के मूल्यों का परिणाम है। स्वतंत्रता का अधिकार संविधान के भाग-4 के अनुच्छेद 19 से 22 तक व्याख्यायित है। महात्मा गांधी की लड़ाई इसी स्वतंत्रता के लिए थी। भारतीय संविधान में जो भी स्वतंत्रता के अधिकार दिए गए है और जितनी भी उसकी सीमाएं निर्धारित की गई है वह सभी गांधी के विचारों और कार्यों से सम्बंधित रहा है।

'शोषण के विरुद्ध अधिकार' के लिए गांधी जी विचार और कर्म दोनों से अग्रसित रहें हैं। उदहारण के तौर पर देखा जाए तो वें चंपारण में हो रहे शोषण के खिलाफ सत्याग्रह किये और सफल भी हुए। उन्होंने बताया किसी भी प्रकार का मजबूरी में उठाया गया लाभ शोषण की श्रेणी में आता है। संविधान में इन्हीं मूल्यों को समाहित किया गया है। वे हमेशा से शरीर के व्यापार चाहे स्वीकृत हो या अस्वीकृत, समाज के लिए बुरा मानते थे।

वे समाज को बलात श्रम की स्वीकृति नहीं दी। शोषण के विरुद्ध स्वराज की मांग करना उनके महत्वपूर्ण कार्यों में से एक कार्य था। स्वराज के अन्दर वे सारी बातें आ जाती है जो किसी व्यक्ति से सम्बंधित होती है। स्वराज के अंतर्गत राजनीतिक, आर्थिक, व्यक्तिगत इत्यादि प्रकार के शोषण से मुक्ति व स्व के ऊपर खुद का नियंत्रण स्वराज होता है। स्वतंत्रता शब्द को व्याख्यायित करते हुए यह कथन अनुकरणीय है कि, "दुसरे के अधीन अथवा आश्रित न होकर अपने अधीन आश्रित होने की अवस्था इसके विपरीतार्थक शब्द है परतंत्रता, पराधीनता।[3]

पंथनिरपेक्षता भारतीय संविधान के प्रस्तावना में ही स्पष्ट कर दिया गया है। गांधी जी के विचार में धर्म सम्प्रदाय वाला नहीं अपितु व्यक्ति की नैतिकता और कर्तव्य से है। सम्प्रदाय की भावना के सन्दर्भ में कहा जाता है कि, "गांधी जी मानते और कहते थे कि "सभी धर्मों का सार एक है।"[4] उनका विचार था कि सभी को एक दुसरे के धर्म ग्रंथों का अध्ययन करना चाहिए। सभी धर्मों ग्रंथों में मानवता के लिए बहुत सी अच्छी चीजें कही गई है। गांधी जी राजनीति और धर्म के संबंध को स्वीकार करते हैं। वे धर्म को कर्तव्य की दृष्टि से देखते हैं।

---

[2] गाँधी जी, मंगल-प्रभात, pg. no.32

[3] मोदी प्रसाद नृपेन्द्र, गाँधी-दृष्टि, pg. no.90

[4] रामरतन, शोभित शारदा, महात्मा गाँधी की राजनैतिक अवधारणाएं, pg. no.135

संविधान के अंतर्गत नागरिक अधिकार में शिक्षा के अधिकार की बात उल्लेखित है। इसमें यह कहा गया है कि धर्म और अल्पसंख्यकों को अपने रूचि पर आधारित शिक्षण संस्थान खोल सकता है। सहायता देने में राज्य द्वारा भेद नहीं किया जाएगा। जब संविधान के विविध अधिकारों में शिक्षा का अधिकार सम्मलित किया गया तो न केवल शिक्षा में बढ़ोत्तरी हुई अपितु लोगों की सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक समझ ढंग से विकास की ओर अग्रसर है। संविधान में शिक्षा का अधिकार महात्मा गांधी के मूल्यों और विचारों के समन्वय का परिणाम है।

गांधी जी शिक्षा के माध्यम से भारत पर जो निरक्षरता का कलंक था उसे हटाना चाहते थे। वे चाहते थे कि भारत को पुनः शिक्षित किया जाए जिससे सामाजिक, आर्थिक अनाचार से मुक्त किया जाए। लोगों का मतदान बेकार या हसीं का पात्र न बने इसलिए उन्होंने मत देने और चुने जाने के अधिकार के लिए साक्षरता शर्त रखी थी। वे प्रयासरत थे कि कम से कम प्राथमिक शिक्षा सभी प्राप्त करें। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए ही वर्धा शिक्षा योजना की शुरुआत की गई थी। जिसमें जोर दिया गया कि सात वर्ष तक के बच्चे को शिक्षित करने का कर्तव्य स्वयं मां और बाप उठाएं। "7 से 14 वर्ष की शिक्षा को अनिवार्य बताया यदि नहीं हुआ तो मैन- बाप को दण्डित करने की बात कही।" [5]

गांधी जी ने विचार दिया था कि, "प्राथमिक शिक्षा का खर्च राज्य वहन करेगा, क्योंकि लोगों की एक न्यूनतम शिक्षा स्तर बनेगी, जो समाज और राज्य दोनों की गुणवत्ता को बढ़ाएगी।"[6]

भारतीय संविधान भाग-4 (अनुच्छेद 36-51)

इतने अनुच्छेदों के मध्य संविधान के द्वारा राज्य को निर्देश दिया जाता है कि राज्य को लोककल्याणकारी राज्य बनाने के लिए किन-किन रास्तों पर चलना जरुरी है। इसको किसी नागरिक के द्वारा न्यायालय में नहीं ले जाया जा सकता। राज्य का नीति निदेशक तत्व वास्तविक रूप से राज्य का नागरिकों के प्रति कर्तव्य कहा जा सकता है। यह आयरलैंड के संविधान से प्रेरित है।

राज्य के नीति निदेशक तत्वों की जिस तरह से व्याख्या की गई है और जिस तरीके से इसके कार्यक्रम निर्धारित किये गए है, उससे स्पष्ट है कि राज्य के नीति निदेशक तत्व के हर शब्दों पर महात्मा गांधी के मूल्यों और

[5] रामरतन, शोभित शारदा, महात्मा गाँधी की राजनैतिक अवधारणाएं, pg. no.144
[6] रामरतन, शोभित शारदा, महात्मा गाँधी की राजनैतिक अवधारणाएं, pg. no.135

विचारों की अमिट छाप पड़ी है। इसके प्रथम पंक्ति में कहा गया है कि राज्य ऐसे सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करें जिसमें आर्थिक, राजनीतिक, न्याय और राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं को जीवन प्राप्त हो। इन संस्थाओं की सिर्फ जीवन ही नहीं अपितु इनकी स्थापना और संरक्षण प्रदान करके लोक कल्याणकारी बनाएं।

इस प्रकार प्रथम पंक्ति से ही इसके उद्देश्य निश्चित कर दिए गए है। राज्य लोककाल्याणकारी होने का तात्पर्य सरलता से शासन करेगा। लोगों की भावना को डर से नहीं अपितु प्रेम और सम्मान से भरने का प्रयास किया जाएगा। महात्मा गांधी राज्य को बल(शक्ति) का प्रतिक मानते थे जिसमें शासन करने का साधन हिंसा होता था। जिसके परिणाम स्वरुप वे राज्य के निरंकुश शक्ति पर लगाम लगाते हुए उसकी सीमाओं का निर्धारण करते है। महात्मा गांधी जी के द्वारा राज्य को बताए गए कार्य इस प्रकार है-"

1. पिछड़े लोगों के लिए कार्य करना।
2. जनता के शिकायतों का निवारण।
3. निष्पक्ष और निःशुल्क न्याय व्यवस्था
4. विधान मंडल जनकल्याण के लिए कानून बनाने की पहल करें, लोगों के संघर्ष और आन्दोलन की प्रतीक्षा न करता रहे।
5. कोई भी कदम उठाने के पहले जनमत का विशेष ध्यान दे।
6. विभिन्न सम्प्रदायों, जातियों व वर्गों के विच के संबंधों को मधुर बनाएं और आपसी विवाद को शांतिपूर्ण समाधान के लिए प्रोत्साहित करें।
7. कार्यपालिका निरंकुश न हो।"[7]

इस प्रकार के दायित्व महात्मा गांधी राज्य को सौपतें है। जिसमें सभी विचारधाराओं के मेल से उत्पन्न होने वाले अच्छे कार्यों की सूची महात्मा गांधी राज्य को सौपतें है। कोई भी विचारधारा राज्य को सौपें कार्यों की तार्किक आलोचना नहीं कर सकती है। क्योंकि इन कार्यों में न केवल समाजवाद को स्थान मिला है अपितु उत्तम,

[7] रामरतन, शोभित शारदा, महात्मा गाँधी की राजनैतिक अवधारणाएं, pg. no.73

सादगीपूर्ण जीवन जीने का रास्ता भी छिपा है। न्याय के सन्दर्भ में कहते हैं कि न्याय मिलने में देरी नहीं होनी चाहिए। और न ही न्याय के लिए कोई शुल्क लगाने चाहिए।

पिछड़ों का संबंध उन दलितों का है जो न केवल सामजिक अपितु आर्थिक दृष्टि से भी बदहालीपूर्ण जीवन जीने को मजबूर है, वे मजदूर जिन्हें पूरा दिन काम करने के बाद भी भूखे पेट सोना पड़ता है, उन स्त्रीयों से है जिनके लिए चारदीवार ही उनकी दुनिया है उन्हें न तो सामजिक, राजनैतिक कार्यों से कोई मतलब नहीं और न ही व्यावहारिक रूप से स्वयं के अस्तित्व से। इस प्रकार के पिछड़ों की दशा और दिशा सुधारने के लिए संविधान में नीति निदेशक तत्वों को शामिल किया गया है। जो महात्मा गांधी के मूल्यों व विचारों को संविधान की तरफ वैधता प्रदान करता है।

भारतीय संविधान भाग-4 अनुच्छेद 38 (2)

इस अनुच्छेद में राज्य को निर्देश दिया गया है कि राज्य प्रयास करेगा कि राज्य के लोगों में आय की विषमता न हो। अर्थात् राज्य में कोई बहुत धनवान न हो और न कोई निहायत गरीब। इस अनुच्छेद में गांधी के विकेंद्रीकृत संसाधनों का बटवारा जैसे विचारों को अनुग्रहित किया गया है।

आय की विषमता न उत्पन्न के संबंध में गांधी जी कहते हैं कि, "इसका अर्थ यह होता है कि एक ओर जिन मुट्ठीभर पैसेवालों के हाथ में राष्ट्र की संपत्ति का बड़ा भाग इकठ्ठा हो गया है, उनकी संपत्ति को कम करना, और दूसरी ओर जो करोंड़ों लोग अधपेट खाते है और नगें रहते है उनकी संपत्ति में वृद्धि करना।"[8] इस प्रकार के कथनों स्पष्ट है कि जो उद्देश्य गांधी जी के विचारों और मूल्यों का था वही उद्देश्य संविधान में सम्मिलित नीति निदेशक तत्व का भी है।

भारतीय संविधान भाग-4 अनुच्छेद 39

इस अनुच्छेद में संविधान राज्य को निर्देश देता है कि संसाधनों का केन्द्रीकरण न होने पाए। राज्य के जितने भी संसाधन है उनका विकेंद्रीकरण आवश्यक है जिससे सामूहिक हित की साधना पूर्ण हो सकें। आर्थिक

[8] गाँधी जी, रचनात्मक कार्यक्रम, pg. no.35

समानता के लिए उनका कथन है कि, "आर्थिक समानता के लिए कार्य करने का मतलब है, पूंजी और मजदूरी के बीच झगड़ों को हमेशा के लिए मिटा देना है।"[9]

इस अनुच्छेद के भाग 'घ' में स्त्रियों को सामान कार्य सामान वेतन देने की निर्देश देता है। भाग 'ङ' में निर्देश दिया गया है कि किसी भी पुरुष, स्त्री, बालकों के श्रम का शोषण न हो। आर्थिक विवशता कितनी भी हो पर किसी भी नागरिक को ऐसे रोजगार में न जाना पड़े जो उनके आयु, शक्ति के अनुकूल न हो। बालकों को स्वतंत्र, स्वास्थ्य और गरिमामय वातावरण में शिक्षा देने का निर्देश देता है।

संसाधनों का विकेंद्रीकरण गांधी जी के विचारों का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। वे समाजवाद के समर्थक थे जिनमे किसी का शोषण नहीं होता था। वे शोषण को बढ़ावा देने वाली मशीनीकरण, तीव्र औद्योगीकरण इत्यादि के विरुद्ध थे। उनका कहना था कि ये सभी शोषण और पराधीन बनाने का जरिया है। वे चाहते थे कि संसाधनों का सामूहिक बंटवारा होने से ही वास्तविक सामूहिक हित प्राप्त हो सकता है।

गांधी जी स्त्रियों के समानतावादी विचारकों में से एक थे। वे स्त्रियों के सामजिक, राजनैतिक, आर्थिक, शैक्षिणक व नैतिक सुधार करना चाहते थे। वे इन सब सुधारों के माध्यम से उन्हें उनका वास्तविक पहचान दिलवाने के पक्ष में थे। वे नहीं चाहते थे कि उनका जीवन सिर्फ चारदीवारों के बीच में ही समाप्त हो जाए। इसके संबंध में उनका कथन है कि, "कांग्रेसवाले अभी तक यह नहीं जान पाए कि सेवा के धार्मिक काम में स्त्री ही पुरुष की सच्ची सहायक और साथिन है। जिस रूढ़ि और कानून के बनाने में स्त्री का कोई हाथ नहीं था और जिसके लिए पुरुष जिम्मेदार है, उस रूढ़ि और कानून के जुल्मों ने स्त्री को लगातार कुचला है।"[10]

इस कथन का तात्पर्य है कि हमें उन्हें अपने सेवक नहीं अपितु उन्हें अपने सहयोगी के तरीके से व्यवहार करना चाहिए जिससे उनका भी समन्वित विकास हो सकें।

वे गरीब बालकों की शिक्षा को लेकर बहुत ही चिंतित थे। क्योंकि उस समय बहुत कम ही लोग ही शिक्षित हो पाते थे। शिक्षा के लिए गरीब के बच्चे सोच भी नहीं सकते थे। इस संबंध में उनका कथन है कि, मुझे

[9] गाँधी जी, रचनात्मक कार्यक्रम, pg. no.35
[10] गाँधी जी, रचनात्मक कार्यक्रम, pg. no.29

सब तरह की जबरदस्ती से नफ़रत है। जैसे मैं इस प्रकार के आपत्तिजनक उपायों से राष्ट्र को व्यसनी नहीं बनाना चाहूँगा वैसे ही मैं यह भी पसंद नहीं करूँगा राष्ट्र को शिक्षित बनाया जाए।

परन्तु जैसे मै शराब की दुकाने खोलने से इंकार करके और मौजूदा दुकानों को बंद करके मद्यपान को निरुत्साहित करूँगा, वैसे ही रास्तों की रुकावटों को दूर करके और निःशुल्क पाठशालाएँ खोलकर तथा उन्हें आवश्यकता के अनुसार चलने वाली बनाकर निरक्षरता को मिटाने की कोशिश करूँगा।"[11]

भारतीय संविधान भाग-4 अनुच्छेद-39

इस अनुच्छेद में राज्य को निर्देश दिया गया है कि राज्य नागरिकों को सामान और निःशुल्क न्याय मुहैया कराने का प्रयास करेगा। न्यायपालिका और न्याय के सन्दर्भ में महात्मा गांधी के विचार का उल्लेख इस प्रकार है, "न्यायपालिका को विधानमंडल तथा कार्यपालिका दोनों से स्वतंत्र होना चाहिए। तथा उसे बिना किसी लालच या भय के, निष्पक्ष रूप से, न्याय करना चाहिए। तथा न्याय करते समय न्यायपालिका न केवल संसदीय कानून का सहारा ले बल्कि वादी-प्रतिवादी दोनों की निजी धर्मों का भी ध्यान रखे। समूची न्याय व्यवस्था ऐसी हो कि न्याय निःशुल्क तथा तुरंत मिले।"[12]

भारतीय संविधान भाग-4 अनुच्छेद-40

इस अनुच्छेद में राज्य को ग्राम-पंचायत का गठन का निर्देश है। ग्राम स्वराज महात्मा गांधी के प्रमुख लक्ष्यों में से एक था। वे गाँव की स्वायत्तता को लेकर बहुत ही तार्किक रूप से समर्पित थे। वे शहरीकरण, औद्योगीकरण के खिलाफ थे क्योंकि यहाँ पर एक दुसरे का शोषण, हिंसा होता है। गांवों की तरफ इनका रुख इसलिए था कि पर्यवरण, सादगी, स्वावलंबन इन्हीं गांवों में थी। वे गांवों का जीर्णोद्धार करना चाहते थे जो भौतिकतावाद के नशे में जर्जर हो गई थी। शहरों के सन्दर्भ में वे कहते हैं कि, "उसमें लोग सुखी नहीं होंगे। उसमें धूर्तों की टोलियाँ और वेश्याओं की गलियां पैदा होंगी, गरीब आमिर से लुटे जाएंगे।"[13]

---

[11] महात्मा गाँधी, नई तालीम की ओर, pg. no.86

[12] रामरतन, शोभित शारदा, महात्मा गाँधी की राजनैतिक अवधारणाएं, pg. no.56

[13] गाँधी जी, हिन्द-स्वराज, pg. no.76

इसलिए गांधी जी ने गाँव को ही सुखी, रहने योग्य, और आत्मिक विकास का एक बड़ा स्त्रोत माना। नीति निदेशक तत्व भी उनके लक्ष्य को लक्ष्य मानकर ग्राम-पंचायतों के गठन का निर्देश देता है। ग्राम पंचायत के गठन के अतिरिक्त संविधान राज्य को राज्य के नीति निदेशक तत्वों के माध्यम से कई गांधी जी मूल्यों को व्यवहार में लाने का दायित्व सौंपता है।

नीति-निदेशक तत्व राज्य को निर्देश देता है कि राज्य गरीब, बूढ़े, निःशक्त व्यक्तियों को सहायता दिलवाने का प्रयास करेगा। स्त्रियों के मानवोचित मातृत्व का ध्यान देगा।

जीवन यापन हेतु लधु-उद्योग और कुटीर उद्योग को बढ़ावा देने का प्रावधान करेगा। उद्योगों में कामगार के हिस्से को निर्धारित करने का प्रयास करेगा। नागरिकों के लिए एक समान सिविल संहिता प्राप्त कराने का प्रयास करेगा।

राज्य प्रयास करेगा कि चौदह वर्ष तक के सभी बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा दे। राज्य को निर्देश है कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों का शिक्षा और आर्थिक विकास सावधानीपूर्वक करेगा अर्थात राज्य अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के मूल्यों और परम्पराओं को क्षति नहीं पहुंचाने का प्रयास करेगा। राज्य के नागरिकों के जीवन स्तर और स्वास्थ्य को अपने प्रमुख कर्तव्यों में रखेगी। मादक वस्तुओं को पूरी तरीके से नियंत्रतित करने का प्रयास करेगी।

नीति-निदेशक तत्व के माध्यम से निर्देश दिया गया है कि राज्य कृषि और पशुपालन में वरीयता देगी। पशुओं की नई नस्ल और उनके वध को रोकने का भरसक प्रयास करेगी। पर्यावरण का संरक्षण वन्य जीवों की भी रक्षा करेगी। राज्य कार्यपालिका न्यायपालिका के कार्यों में कोई दखल नहीं देगा।

राज्य के निति निदेशक तत्वों में कुछ अन्तर्राष्ट्रीय संबंध से सम्बंधित नीतियों का उल्लेख किया है जिसका पालन करना राज्य का कर्तव्य होगा। अन्तर्राष्ट्रीय मंच के नीति-निदेशक तत्व इस प्रकार है-

1. अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा की वृद्धि करेगी।
2. राष्ट्रों के मध्य न्याय सांगत और सम्मान पूर्ण संबंधों को बनाए रखने का।
3. संगठित लोगों के एक दुसरे व्यवहार से व्यवहारों में अन्तर्राष्ट्रीय विधि और संधि-वाध्याताओं के प्रति आदर बढ़ने का।

4. अन्तर्राष्ट्रीय विवादों की मध्यस्थता द्वारा निबटारे के लिए प्रोत्साहन देने का प्रयास करेगा।

संविधान ने इस प्रकार के निर्देश भारतीय संविधान के भाग-4 के अनुच्छेद 36 से 51 के मध्य दिया है। जितने भी निर्देश दिए गए है उनका संबंध प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप महात्मा गांधी में मूल्यों से अवश्य ही जुड़ा है। वह निर्देश चाहे पशु पक्षी के सन्दर्भ में हो या चाहे पर्यावरण और वन्य जीव के विषय में हो। वे स्त्री के विकास समेत किसान और मजदूरों के वास्तविक हितैषी थे जो उन्हें समाजवाद के समीप ले जाता है।

वे गाँव को अधिक तवज्जो देते थे क्योंकि उनका मानना था कि गाँव में अभी भी संस्कार, विचार, सादगी, स्वच्छता आदि सुरक्षित है। वे शिक्षा के बड़े ही हिमायती थे। उनका मानना था कि शिक्षा को राज्य के द्वारा संचालित किया जाना चाहिए। शिक्षा को जबरन नहीं अपितु आवश्यकता के अनुसार और स्वेच्छा से देना चाहिए। उनका कथन है कि, "यह मान बैठना उचित नहीं है कि अधिकांश माता-पिता इतने मुर्ख या ह्रदयहीन हैं कि उनके बच्चों की शिक्षा उनके द्वार तक मुफ्त पहुंचा दी जाए तो भी वे उसकी परवाह न करेंगे।"[14]

वे मद्य प्रदार्थों के बड़े ही विरोधी थे। उनके ही किताब, 'सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा' में वे कहते हैं कि "उन्होंने प्रतिज्ञा लिवायी और मैनें मांस, मदिरा, तथा स्त्री-संग से दूर रहेंगे।"[15] उन्हीं के मद्य के विरोध के कारण वर्धा जिले में शराब की बिक्री पर रोक है।

इस प्रकार के जितने भी राज्य को निर्देश प्राप्त है वे सारी बातें महात्मा गांधी के विचारों में पहले से ही स्थान बनाये हुए थी। महात्मा गांधी जी उस विचार को व्यवहार में लागू करने की बात करने के साथ-साथ लागू करने के तरीके भी बताये हैं। संविधान में उल्लेखित नीति-निदेशक तत्व के सन्दर्भ में कहा जा सकता है कि इस पर गांधी जी के मूल्यों की अमिट छाप है।

शोध का महत्व

उक्त शोध कार्य 'गांधी चिंतन के आलोक में भारतीय संविधान का समाकलन' आज के परिदृश्य में बहुत महत्वपूर्ण शोध कार्य साबित होगा। उपभोक्तावाद के वर्चस्व के कारण औद्योगीकृत संस्कृति भी अपना पैर पसारने लगा है| लोगों के द्वारा ब्रांड वस्तुओं के प्रति बढ़ते रुझान और तेजी से वृद्धि कर रहे मशीनीकरण के फलस्वरूप

[14] गांधी जी, नई तालीम की ओर, pg. no.87)

[15]गाँधी.क.मो. , सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा', pg. no.35

उत्पन्न हो रहे बेरोजगारी के दौर को गांधी के चिंतन से समाप्त करने में सहयोगी होगा। इधर कुछ वर्षों में सतही विकास नीतियां हासिये पर जा रही है। प्रस्तुत शोध कार्य गांधी जी के चिंतन को बल के साथ-साथ उसकी प्रासंगिकता सिद्ध करने में सहायक होगी।

प्रस्तावित शोध कार्य 'गांधी चिंतन के आलोक में भारतीय संविधान का समाकलन' से विकास एवं शांति, राजनीति विज्ञान व अन्य विषय के शोधार्थी लाभान्वित होंगे। अतः विकास एवं शांति की दृष्टि से यह शोध कार्य अपनी अपनी आवश्यकता को सिद्ध करेगा| मेरा यह प्रयास होगा कि प्रस्तावित शोध कार्य शैक्षणिक गतिविधियों में अपनी महत्ता साबित करने के काबिल हो सकें।

शोध के उद्देश्य

`कोई भी शोध कार्य तभी उचित माना जाता है जब उसमें समाज कल्याण की बात हो। किसी भी शोध कार्य को करने के पीछे शोधार्थी का कोई निश्चित उद्देश्य निहित होता है। उक्त शोध कार्य 'गांधी चिंतन के आलोक में भारतीय संविधान का समाकलन' विषय पर है और उक्त शोध कार्य एक तरह से बहु-उद्देशीय शोध कार्य है। इस शोध कार्य के कुछ मुख्य उद्देश्य इस प्रकार हैं:-

- संविधान सभा के सदस्य न रहते हुए भी गांधी जी का संविधान सभा में महत्व को जानना।
- नवनिर्मित संविधान में महात्मा गांधी के चिंतन की हिस्सेदारी को जानना।
- संविधान की गांधीवादी दृष्टिकोण से व्याख्या करना।
- संविधान की सफलता के माध्यम से वर्तमान समाज में गांधी के चिंतन की महत्ता सिद्ध करना।

शोध प्राविधि

प्रस्तुत शोध कार्य 'गांधी चिंतन के आलोक में भारतीय संविधान का समाकलन' में विश्लेषणात्मक और वर्णनात्मक शोध प्राविधि का उपयोग किया जाएगा। प्रस्तुत शोध कार्य के साधन के रूप में द्वितीय स्त्रोत होंगे। जिनमें गांधी जी के द्वारा लिखे गए साहित्य के साथ-साथ संविधान सभा में हुए बहस, गांधी जी चिंतन के विद्वतजन, इतिहासकार, इत्यादि के साहित्य संग्रह को प्रयोग में लाया जाएगा| संविधान के अध्ययन हेतु भारतीय संविधान के मूल-ग्रन्थ के साथ संबंधित साहित्य का सहयोग लिया जाएगा|

अध्याय – 2

संविधान में वर्णित मूल अधिकार पर महात्मा गाँधी के चिंतनावलोक:

भारतीय संविधान में नागरिक के कुछ अधिकार सुनिश्चित किये गए हैं। इन अधिकारों का उद्देश्य है कि नागरिक राष्ट्र में रहकर अपना सम्पूर्ण विकास करें। नागरिक को मूल अधिकार भारतीय संविधान के भाग-3 के अनुच्छेद 12-35 के अंतर्गत दिया गया है। नागरिक अधिकारों का दृष्टिकोण नकारात्मक है। नागरिक अधिकार राज्य पर प्रतिबन्ध लगाते हैं कि राज्य इन नागरिक विषयों पर निरंकुश नहीं हो सकता।

अधिकार को देने में अन्य उद्देश्यों में नागरिकों के सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और व्यक्तिगत के साथ-साथ भारतीय विविधता में निवास कर रहे विभिन्न प्रकार के अल्पसंख्यकों जिसमें भाषायी, क्षेत्रीय, सांप्रदायिक लोगों को संरक्षण व सुरक्षा प्रदान करना है। इसके अतिरिक्त भारत में व्याप्त सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक अव्यावहारिक असमानता को सामंजस्यशील करने के लिए अधिकार दिए गए है। जिससे भारत में लोककल्याण स्थापित किया जाए और देश में सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक न्याय को स्थापित किया जाए।

मौलिक अधिकार देने का तात्पर्य है कि राष्ट्र में मर्यादित शासन की स्थापना और सञ्चालन को सुनिश्चित हो। संविधान सभा में नागरिक अधिकार देने की जिम्मेवारी का कारण है कि तत्कालीन भारतीय समाज असुरक्षा और असंतोष की चपेट में था। इन्हीं समस्याओं से निजात पाने के लिए नागरिक अधिकार को सम्मिलित किया गया। नागरिक अधिकार को भविष्य के लिए सुरक्षित रखने के लिए विधि का निर्माण किया गया है। इसमें यह प्रावधान किया गया है कि सामान्य अधिकार को सामान्य विधायी प्रक्रिया के तहत परिवर्तित या निलंबित नहीं किया जा सकता है। मौलिक अधिकार की मजबूती यह है कि यह नागरिक को राज्य के विरुद्ध प्राप्त है। इसलिए यह व्यक्ति के ऊपर राज्य की शासन सीमा को सीमांकित करता है।

समानता का अधिकार एवं गांधी चिंतन

समानता के अधिकार को संविधान में अहम् स्थान देने का कारण फ्रांस की क्रांति के अतिरिक्त महात्मा गांधी का समानता स्थापित करने की बड़ी पैरोकारी है। गाँधी जी के दृष्टिकोण में समाज में समानता समाज के लिए

बहुत आवश्यक है। भारत के संबंध में उनका विचार था कि 'शेर और बकरी एक घाट पर एक साथ पानी पिए।' उनके सामाजिक विचारों से स्पष्ट होता है कि वें सामाजिक समानता के व्यावहारिक और कुसल चिन्तक थे। महात्मा गांधी अपनी पुस्तक 'मेरे सपनों का भारत' में सामजिक समानता को लेकर विस्तृत चर्चा किये हैं। इस पुस्तक में उन्होंने वर्ण व्यवस्था, जाति व्यवस्था, स्त्री, सर्वोदय और मजदूरों के संबंध में गहन चिंतन व्यक्त किया है।

आर्थिक समानता के लिए उन्होंने अपनी पुस्तक 'मेरे सपनों का भारत' में उद्योगवाद को अभिशाप बताकर अपिग्रह और सर्वकल्याणकारी जीवन-पद्धति को विस्तृत ढंग से व्यवहार में लाने पर जोर दिया है। आर्थिक समानता के संबंध में उनका चिंतन उनके अन्य पुस्तक 'रचनात्मक कार्यक्रम' में **आर्थिक समानता** को विषय सूची में शामिल किया गया है। समानता के बड़े प्रवर्तक के रूप में महात्मा गांधी अपनी पुस्तक 'मंगल-प्रभात' में अस्पृश्यता-निवारण, जात-मेहनत, सर्वधर्म-समभाव-१, सर्वधर्म-समभाव-२ को विषय सूची में महत्वपूर्ण स्थान दिए है-

सविधान के 12वें अनुच्छेद में राज्य की परिभाषा को सुस्पष्ट किया गया है। भारतीय संविधान के भाग-3 के अनुच्छेद-12 में राज्य के अंतर्गत आने वाले प्राधिकारों को स्पष्ट किया गया है। भारतीय संविधान के भाग-3 के अनुच्छेद-13 के अंतर्गत उन परिस्थितियों का वर्णन किया गया है जब राज्य के कानूनों को मौलिक अधिकारों के अनुरूप न होने की दशा में अधिमान्य करार दिया जाता है। इसके अतिरिक्त अनुच्छेद-13 मूल अधिकारों को सर्वोच्च स्थान पर प्रतिष्ठित करता है।

यह अनुच्छेद घोषित करता है कि वे सभी विधियाँ जो किसी मूल अधिकार से असंगत है या उसके प्रतिकूल हैं, उस सीमा तक अविधिमान्य होगी जहाँ तक वे मौलिक अधिकारों का हनन करते हैं। अतः न्यायपालिका को यह अधिकार है कि वह ऐसी विधि को जो संविधान के उपबंधों से असंगत है, असंवैधानिक घोषित करे।

मौलिक अधिकार विधानमंडल की शक्तियों को भी मर्यादित करते हैं। सभी विधियाँ चाहे वे विधानमंडल द्वारा बनायीं गयी हों या प्रत्यायोजित प्राधिकारी द्वारा, मौलिक अधिकारों के अनुरूप होनी चाहिए। इसी प्रकार कार्यपालिका के सभी कार्य भी मूल अधिकारों से संगत होने चाहिए। राष्ट्रपति द्वारा अनु.-123 के अधीन और राज्यपाल द्वारा अनुच्छेद-213 के अधीन प्रख्यापित अध्यादेश मूल अधिकारों से असंगत नही होने चाहिए। मूल अधिकारों से असंगत कानूनों की स्थिति में यह अनुच्छेद भारतीय न्यायालयों को यह शक्ति प्रदान करता है कि वे

ऐसे कानूनों को अवैध घोषित कर सकती हैं। न्यायालयों की इसी शक्ति को **न्यायिक पुनरावलोकन** की शक्ति कहते हैं। अनुच्छेद-13 (3) (क) में कानून के परिधि में विधि का बल रखने वाला कोई अध्यादेश, आदेश, उपविधि, नियम, विनियम, अधिसूचना, रूढ़ि या प्रथा है। विधि की इस परिभाषा में विधानमंडल द्वारा अधिनियमित विधि नही है। इसका कारण यह है कि अधिनियमित विधि, विधि का ऐसा सर्वमान्य उदहारण है जो सर्वाधिक स्पष्ट है, इसलिए उसे परिभाषा में रखने की आवश्यकता नही समझी गई।[16]

आर्थिक समानता के संदर्भ में संविधान सभा को गाँधी जी के न्यासिता सिद्धांत से कुछ विशेष प्राप्त हुआ है। जो संविधान के मूल अधिकार में शामिल जाने का प्रयास किया गया। न्यासिता के माध्यम से गांधी जी समाज में आर्थिक समानता लाने की बात करते हैं। महात्मा गांधी ने आर्थिक संवृद्धि के लिए शारीरिक श्रम को महत्व देते हुए कहते हैं कि, "प्रत्येक मनुष्य को अपने शरीर से इतना श्रम अवश्य करना चाहिए जिससे वह अपनी दैनिक आवश्यकता की वस्तुओं का उत्पादन स्वयं कर सकें।" आर्थिक संवृद्धि पूर्णतया नैतिकता और अहिंसा के आधार पर टिका हुआ है। इसके अतिरिक्त पूंजी के संबंध में महात्मा के विचार था कि हमें उतनी ही संपत्ति रखनी चाहिए जितने में हम आवश्यकता की पूर्ति कर सकें। इसी के संबंध में उनका कथन है कि, "प्रेम और निजी संपत्ति साथ-साथ नहीं चल सकते। सैद्धांतिक दृष्टिकोण से पूरा प्रेम तभी संभव है जब पूर्ण अपिग्रह हो। हमारी देह हमारी पूर्ण संपत्ति हो। पूर्ण प्रेम तथा अपिग्रह तभी संभव है जबकि हम मानवीय सेवा में अपने शरीर को अर्पित करने को तैयार हो जाएँ ।"[17]

इस कथन से स्पष्ट है कि महात्मा गाँधी जी द्वारा आर्थिक समानता लाने का दृष्टिकोण सामंजस्यशील और व्यावहारिक है।

सामाजिक समानता के संबंध में दलित उत्थान, हिन्दू संप्रदाय में वर्ण व्यवस्था और जाति व्यवस्था में सुधार के बड़े पैरवीकार थे। भारतीय समाज में वर्ण-व्यवस्था और जाति-व्यवस्था की तात्कालिक अव्यावहारिकता का परिचय देते हुए है कहते हैं कि, "भले ही उसने सैकड़ों साबुनों से बरसों तक शरीर को मला हो, भले ही वह

[16] http://vle.du.ac.in/mod/book/print.php?id=12126&chapterid=24538

[17] सिंह कुमार मनोज, चौधरी कुमार शैलेश, भारतीय राजनीतिक चिन्तक-महात्मा गाँधी, pg. no. no.

वैष्णव की पोशाक पहनता हो, माला-कंठी धारण करता हो, भले ही वह रोज गीता-पाठ करता हो, लेखक का धंधा करता हो, तो भी वह अछूत माना जाता है।"[18]

अमानवीय व्यवहार और उसकी निंदा व निवारण करने के लिए वे कहते हैं कि, "अस्पृश्यता-निवारण को व्रत में जगह देकर हम जाहिर करते हैं कि अछुतपन हिन्दू धर्म का अंग नहीं है इतना ही नहीं बल्कि वह हिन्दू धर्म में पैठी हुई सड़न है, वहम है, पाप है, और उसे मिटाना हर एक हिन्दू का धर्म है, उसका परम कर्तव्य है। इसलिए जो उसे पाप मानता है वह उसका प्रायश्चित के तौर पर ही समझदार हिन्दू अपना धर्म समझकर हरएक अछूत माने जाने वाले भाई या बहन को पहनावे; प्रेम से और सेवाभाव से उसे छुए, छूकर अपने को पावन हुआ माने, अछूतों का दुःख दूर करें।"[19] महात्मा गांधी ने अस्पृश्यता-निवारण को मानव स्वभाव का हिस्सा बनाने का प्रयास किये। जिसकी प्रासंगिकता स्वाधिनेत्तर भारत के संविधान में देखने को मिलती है।

भारतीय संविधान के अनुसार लिंग के आधार पर भेदभाव की मनाही है। यह भी महात्मा के चिंतन सागर के लिए एक नदी है। महात्मा के चिंतन श्रृंखला में स्त्री समग्र उत्थान का महत्वपूर्ण स्थान है। इस संबंध में उनका यह कथन उल्लेखनीय है कि, "हिन्दुस्तान की स्त्रियाँ जिस अँधेरे में डूबी हुई थी, उसमें से सत्याग्रह के तरीके ने उन्हें अपने आप बाहर निकाल लिया है। यह भी सच है कि उन्हें वे किसी तरीके से वे इतने कम समय में जिस पर विश्वास नहीं हो सकता, आगे न आ पाती। फिर भी स्त्री जाति की सेवा को मैंने रचनात्मक कार्यक्रम में जगह दी है, क्योंकि स्त्रियों को पुरुषों के दर्जे से और अधिकार से स्वराज की लड़ाई में शामिल करने के लिए कुछ भी करना चाहिए। यह सब बात कांग्रेसियों के दिल में बसी नहीं है।[20]

इस तरह महात्मा गांधी जी ने स्त्रियों को स्वाधीनता आन्दोलन में बेहतर हिस्सेदारी देकर उन्हें सशक्त करने का प्रयास किया। जिससे वे घरों की चहारदीवारियों से बाहर आये और अपनी शक्ति के अनुरूप अपनी पहचान व खुद को स्थापित करें। स्त्री चिंतन के संबंध में कहा जा सकता है, "गांधी जी चाहते थे कि समाज व पुरुषों के मुकाबले, महिलाओं से लिंग के आधार पर भेदभाव न करें, तथा उनके उद्धार व कल्याण के लिए विशेष अवसर

---

[18] महात्मा गांधी, मंगल-प्रभात, pg. no. no. 32

[19] महात्मा गांधी, मंगल-प्रभात, pg. no. no. 32

[20] गाँधी जी, रचनात्मक कार्यक्रम, pg. no. no. 29

उपलब्ध करायें। राज्य उन्हें पुरुषों के सामान स्तर प्रदान करने के लिए शिक्षा, रोजगार तथा विधानमंडलों में भाग लेने के अवसरों में पहल करें।[21]

इस प्रकार स्त्रियों के संबंध में महात्मा गांधी के चिंतन से प्रभावित होकर ही स्त्रियों को पुरुषों के समान किये जाने का प्रयास किया जा रहा है। स्त्रियों के समग्र विकास के अवसर उपलब्ध कराने के लिए ही आरक्षण का प्रावधान किया गया है।

इसके अतिरिक्त लोक नियोजन के विषय भी गांधी जी के समता में विश्वास से प्रभावित हुआ है। उनके इस विचार के संबंध में कहा जाता है कि, "उतना ही वेतन सार्वजनिक पद पर बैठने वाले व्यक्ति को भी मिलेगा जिससे वह सार्वजनिक सेवा में शामिल हो। रोजी-रोटी आदर्श का पालन करने वाली जनता सत्ता के दुरुपयोग को चुनौती देने की क्षमता से युक्त होगी। और वह शोषण करने वाली स्वार्थी शासकों के छोटे वर्ग, निष्क्रिय, एवं विचारहीन आज्ञापालन करने वाली शोषित जनता में राज्य को विभाजित नहीं होने देगी।"[22] इस कथन से स्पष्तः कहा जा सकता है कि लोक नियोजन में समानता को शामिल करने का कारण महात्मा गाँधी जी का समानता के लिए व्यापक चिंतन रहा है।

अंततः कहा जा सकता है कि समानता के अधिकार में सम्मिलित वे सभी समानताएं महात्मा गाँधी जी के चिंतन से सम्बंधित है जो समाज की बड़ी जनसंख्या के के लिए आवश्यक थी। समानता के संबंध में उनका चिंतन सामंजस्यशीलता को ग्रहण करके उसे व्यवहार में लाने योग्य बनाया। उनके व्यावहारिक समानता की सोच को मूर्त रूप देने अर्थात् समाज में लागू करने का कार्य संविधान सभा ने संविधान में वर्णित समानता के अधिकार के माध्यम से व्यावहारिक और प्रासंगिक करने का सफल और सुफल प्रयास किया है।

स्वतंत्रता का अधिकार और गांधी चिंतन :-

भारतीय संविधान में स्वतंत्रता का अधिकार दिया गया हैं जिस पर गांधी जी के चिन्तन का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। गांधी जी और संविधान अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को बहुत ही महत्व प्रदान किये हुए हैं। या कहा जाय की गांधी जी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की लड़ाई लड़े है तो गलत न होगा। संविधान सभा ने उनके इस लड़ाई

[21] रामरतन, शोभिका शारदा, गांधी जी की राजनैतिक अवधारणायें, pg. no. no. 143
[22] सिंह कुमार मनोज, चौधरी कुमार शैलेश, भारतीय राजनीतिक चिन्तक-महात्मा गाँधी, pg. no. no.225

को अधिकार में शामिल करके उनके कद को बढ़ाने का कार्य किया है। वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का महत्व दर्शाने के लिये अग्रलिखित वाक्य पर्याप्त होगा- "वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्रजातांत्रिक शासन व्यवस्था की आधारशिला है। प्रत्येक प्रजातान्त्रिक सरकार इस स्वतंत्रता को बड़ा महत्व देती है। इसके बिना जनता की तार्किक और आलोचनात्मक शक्ति को जो प्रजातान्त्रिक सरकार को समुचित सञ्चालन के लिए आवश्यक है, विकसित करना संभव नहीं है।"[23] महात्मा गांधी जी स्वतंत्रता के अधिकार की पैरोकारी में कहते हैं कि, "स्वतंत्रता के अधिकार का एकमात्र उद्देश्य व्यक्ति का सर्वांगीण विकास करना है।"[24]

भारतीय संविधान महात्मा गाँधी की अपेक्षा पर खरा उतरने का भरपूर प्रयास किया है। भारतीय संविधान ने उन सभी बातों को स्वीकार किया है जो व्यक्ति के सर्वांगीण विकास में सहायक सिद्ध होने की संभावना है। भारतीय संविधान ने वाक् अभिव्यक्ति के अतिरिक्त नागरिकों को सूचना का अधिकार भी देता है। 5 दिसंबर 2002 को राष्ट्रीय लोकतान्त्रिक गठबंधन सरकार के द्वारा सूचना की स्वतंत्रता अधिनियम 2002 पारित किया गया।[25]

इसका प्रावधान सरकारी प्रक्रियाओं और तकनीकों में पारदर्शिता लाने के लिए किया गया। इस अधिनियम को पारित करने के बाद शासन प्रक्रिया में सामान्यजन की प्रत्यक्षतः सहभागिता बढ़ी है। शासन की प्रक्रिया में सहभागिता या शासन प्रक्रिया में लोगों की हिस्सेदारी बढ़े महात्मा गांधी जी के जीवंत प्रयास को साकारित करने का प्रयास किया है।

जनसामान्य की शासन में सहभागिता के संबंध में गाँधी जी कहते हैं कि, "मैं ऐसे भारत के लिए कार्य करूंगा जिसमें गरीब से गरीब आदमियों को भी ऐसा लगे भारत उनका अपना देश है- जिसके निर्माण में उनका भी महत्वपूर्ण हाथ है। मैं ऐसे भारत के लिए कार्य करूँगा जिसमें सारी कौमें पूरी तरह से मेल-मिलाप और मित्रता के साथ रहेंगीं।[26] इस कथन से स्पष्ट है कि गांधी जी शासन सहभागिता के लिए सामान्य जन को बहुत महत्वपूर्ण माना। उनके इसी विचार को प्रश्रय देते हुए संविधान नागरिकों को इस प्रकार के अधिकार को देकर उनकी महत्ता को सिद्ध किये हुए है।

---

[23] पाण्डेय राजनारायण, भारत का संविधान, pg.177

[24] पाठक रस्मी भारतीय राजनीतिक विचारक- रस्मी पाठक, 2009 , अर्जन प. हाउस दिल्ली)

[25] पाण्डेय राजनारायण, भारत का संविधान 178

[26] गाँधी, क.मो., गांधी जी अपेक्षा, pg. no. no.3

महात्मा गांधी जी के चिंतन आलोक में संविधान नागरिकों को वे सभी अधिकार देता है जिससे नागरिक व्यापक स्वविकास कर सकते हैं। भारतीय संविधान महात्मा गांधी के चिंतन तजुर्बे से प्रभावित होकर ही "भारतीय नागारिकों शांतिपूर्वक बिना हथियार के सभा करने की स्वतंत्रता प्रदान करता है। इसमें सार्वजनिक सम्मलेनों, सभाओं, एवं जुलूसों का अधिकार भी सम्मिलित है।"[27]

इस अधिकार की महत्ता भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन में सिद्ध हो चुकी है। इस अधिकार से नागरिक शासन के आततायी और निरंकुश शासन का विरोध करते हैं। परन्तु यह अधिकार निरपेक्ष नहीं है। यह लोकहित को प्राथमिकता दिए हुए है। इस विषय से सम्बंधित वर्तमान विधियों की रक्षा करता है, बशर्तें इसके अंतर्गत लगाये गए प्रतिबन्ध लोकहित में युक्तियुक्त हो। यदि सभा हिंसात्मक या जन शान्ति को भंग करने वाली है तो अनुच्छेद 19(1)(ख) की सुरक्षा उसे प्राप्त नहीं होगी।[28] इसी प्रावधान को गांधी जी के चिंतन के आलोक की कसौटी पर परखा जाए तो स्पष्ट हो जाएगा कि उनके अहिंसात्मक साधन मूल्य को बनाये रखे जाने का प्रयास किया गया है।

भारतीय संविधान के भाग-3 के अनुच्छेद 19(1)(ग) में संघ की स्वतंत्रता प्रदान की गई है। इस अनुच्छेद के द्वारा नागरिकों को यह अधिकार प्राप्त होता है कि नागरिक लोकहित के लिए कोई भी संगठन का निर्माण करने सकते हैं। संगठन को बिना किसी रुकावट के संचालित करने का अधिकार प्राप्त है। इस प्रावधान को गांधी चिंतन के आलोक को देखें तो लोकहित, शांति और अहिंसात्मक साधन होना अनिवार्य है किया गया है। अन्यथा राज्य हस्तक्षेप कर सकता है।

भारतीय संविधान के द्वारा प्रत्येक नागरिक को सम्पूर्ण भारत में संचरण करने की स्वतंत्रता प्रदान की गई है। इसका तात्पर्य है कि भारतीय नागरिक बिना किसी निर्वंधन के भारत संघ के किसी राज्य में जा सकता है। इस अधिकार पर कुछ अंकुश लगाए गए है क्योंकि कुछ क्षेत्र शांति और जनहित स्थापित करने में बाधित करते हैं। यदि इस अधिकार को गांधी की दृष्टि से देखने का प्रयास करें तो 'इसका उद्देश्य प्रांतवाद जैसी संकुचित भावना को समाप्त करके प्रत्येक नागरिक में राष्ट्रभक्ति की सृष्टि का संचार करना है।'[29]

---

[27] पाण्डेय राजनारायण, भारत का संविधान, pg. no. no.201

[28] वही

[29] वही

इस कथन के अनुसार सम्पूर्ण भारत में निवास करने की और वृत्ति, उपजीविका, व्यापार एवं कारोबार करने की स्वतंत्रता प्रदान की गई है। इस प्रकार के नागरिक अधिकार देने का प्रमुख उद्देश्य है कि भारतीयों में सम्पूर्ण भारत के प्रति अगाध प्रेम, उत्तरदायित्व, और सहभागिता का निर्माण करना है। क्योंकि इस प्रकार के अधिकार दिए बगैर अखंड भारत का निर्माण संभव नहीं है इसलिए महात्मा गांधी की पैरोकारी को प्रासंगिकता देते हुए संविधान ने इन सभी अधिकारों को नागरिकों को प्रदान किया गया है।

शिक्षा का अधिकार:-

संविधान (छियासीवां संशोधन) अधिनियम, 2002 ने भारत के संविधान में अंत: स्थापित अनुच्छेद 21-(क), ऐसे ढंग से जैसा कि राज्य कानून द्वारा निर्धारित करता है, मौलिक अधिकार के रूप में छह से चौदह वर्ष के आयु समूह में सभी बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान करता है। नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा (आरटीई) अधिनियम, 2009 में बच्चों का अधिकार, जो अनुच्छेद 21क के तहत परिणामी विधान का प्रतिनिधित्व करता है, का अर्थ है कि औपचारिक स्कूल, जो कतिपय अनिवार्य मानदण्डों और मानकों को पूरा करता है, में संतोषजनक और एकसमान गुणवत्ता वाली पूर्णकालिक प्रांरभिक शिक्षा के लिए प्रत्येक बच्चे का अधिकार है।

अनुच्छेद 21-क और आरटीई अधिनियम 1 अप्रैल, 2010 को लागू हुआ। आरटीई अधिनियम के शीर्षक में "नि:शुल्क और अनिवार्य" शब्द सम्मिलित हैं।

'नि:शुल्क शिक्षा' का तात्पर्य यह है कि किसी बच्चे जिसके उसके माता-पिता द्वारा स्कूल में दाखिल किया गया है, को छोड़कर कोई बच्चा, जो उचित सरकार द्वारा समर्थित नहीं है। किसी किस्म की फीस या प्रभार या व्यय जो प्रारंभिक शिक्षा जारी रखने और पूरा करने से उसको रोके अदा करने के लिए उत्तरदायी नहीं होगा। 'अनिवार्य शिक्षा' उचित सरकार और स्थानीय प्राधिकारियों पर 6-14 आयु समूह के सभी बच्चों को प्रवेश, उपस्थिति और प्रारंभिक शिक्षा को पूरा करने का प्रावधान करने और सुनिश्चित करने की बाध्यता रखती है। इससे भारत अधिकार आधारित ढांचे के लिए आगे बढ़ा है जो आरटीई अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार संविधान के अनुच्छेद 21-क में यथा प्रतिष्ठापित बच्चे के इस मौलिक अधिकार को क्रियान्वित करने के लिए केन्द्र और राज्य सरकारों पर कानूनी बाध्यता रखता है।

आरटीई अधिनियम निम्नलिखित का प्रावधान करता है:

- किसी पड़ौस के स्कूल में प्रारंभिक शिक्षा पूरी करने तक नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा के लिए बच्चों का अधिकार।

- यह स्पष्ट करता है कि 'अनिवार्य शिक्षा' का तात्पर्य छह से चौदह आयु समूह के प्रत्येक बच्चे को नि:शुल्क प्रारंभिक शिक्षा प्रदान करने और अनिवार्य प्रवेश, उपस्थिति और प्रारंभिक शिक्षा को पूरा करने को सुनिश्चित करने के लिए उचित सरकार की बाध्यता से है। 'नि:शुल्क' का तात्पर्य यह है कि कोई भी बच्चा प्रारंभिक शिक्षा को जारी रखने और पूरा करने से रोकने वाली फीस या प्रभारों या व्ययों को अदा करने का उत्तरदायी नहीं होगा।

- यह गैर-प्रवेश दिए गए बच्चे के लिए उचित आयु कक्षा में प्रवेश किए जाने का प्रावधान करता है।

- यह नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने में उचित सकारों, स्थानीय प्राधिकारी और अभिभावकों के कर्तव्यों और दायित्वों और केन्द्र तथा राज्य सरकारों के बीच वित्तीय और अन्य जिम्मेदारियों को विनिर्दिष्ट करता है।

- यह, अन्यों के साथ-साथ, छात्र-शिक्षक अनुपात (पीटीआर), भवन और अवसंरचना, स्कूल के कार्य दिवस, शिक्षक के कार्य के घंटों से संबंधित मानदण्डों और मानकों को निर्धारित करता है।

- यह राज्य या जिले अथवा ब्लॉक के लिए केवल औसत की बजाए प्रत्येक स्कूल के लिए रखे जाने वाले छात्र और शिक्षक के विनिर्दिष्ट अनुपात को सुनिश्चित करके अध्यापकों की तैनाती के लिए प्रावधान करता है, इस प्रकार यह अध्यापकों की तैनाती में किसी शहरी-ग्रामीण संतुलन को सुनिश्चित करता है। यह दसवर्षीय जनगणना, स्थानीय प्राधिकरण, राज्य विधान सभा और संसद के लिए चुनाव और आपदा राहत को छोड़कर गैर-शैक्षिक कार्य के लिए अध्यापकों की तैनाती का भी निषेध करता है।

- यह उपयुक्त रूप से प्रशिक्षित अध्यापकों की नियुक्ति के लिए प्रावधान करता है अर्थात अपेक्षित प्रवेश और शैक्षिक योग्यताओं के साथ अध्यापक।

- यह (क) शारीरिक दंड और मानसिक उत्पीड़न; (ख) बच्चों के प्रवेश के लिए अनुवीक्षण प्रक्रियाएं; (ग) प्रति व्यक्ति शुल्क; (घ) अध्यापकों द्वारा निजी ट्यूशन और (ड.) बिना मान्यता के स्कूलों को चलाना निषिद्ध करता है।

- यह संविधान में प्रतिष्ठापित मूल्यों के अनुरूप पाठ्यक्रम के विकास के लिए प्रावधान करता है और जो बच्चे के समग्र विकास, बच्चे के ज्ञान, संभाव्यता और प्रतिभा निखारने तथा बच्चे की मित्रवत प्रणाली एवं बच्चा केन्द्रित ज्ञान की प्रणाली के माध्यम से बच्चे को डर, चोट और चिंता से मुक्त बनाने को सुनिश्चित करेगा।[30]

यह अधिकार पूर्णतया गांधी के चिंतन से आलोकित है। राज्य के द्वारा शिक्षा दिया जाए गांधी जी के प्रमुखतम विचारों में से एक है। उन्हीं के शब्दों में, "मैं भारत के लिए निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के सिद्धांत में दृढ़ता पूर्वक मानता हूँ। मैं यह भी मनाता हूँ कि इस लक्ष्य को पाने का एक ही रास्ता है कि हम बच्चों को कोई उपयोगी उद्योग सिखाएं और उसके द्वारा उनकी शारीरिक, मानसिक, और आध्यात्मिक शक्तियों का विकास सिद्ध करें।"[31] इसके अतिरिक्त गांधी जी ने नई तालीम की स्थापना करने के साथ-साथ वर्धा शिक्षा योजना चलाया। जिसका उद्देश्य सार्थक देश की स्थापना को सुनिश्चित किया जाए।

शोषण के विरुद्ध अधिकार:-

भारतीय संविधान के भाग-3 के अनुच्छेद 23-24 भारतीय संविधान में व्यक्ति की दैहिक स्वतंत्रता सुनिश्चित करने तथा उनके बीच विभेद को रोकने के लिए और दुराचारी व्यक्तियों तथा राज्य के द्वारा समाज के दुर्बल वर्गों के शोषण को रोकने के लिए अनुच्छेद 23 तथा 24 में प्रावधान किया गया है।[32] अंग्रेजी शासन के

[30] (http://mhrd.gov.in/hi/rte-hindi)
[31] 98, महात्मा गांधी, मेरे सपनों का भारत, pg. no. no.98
[32] मंगलानी, डा. रूपा,. भारतीय शासन एवं राजनीति pg. no. no.149

आगमन के पश्चात् भारत में जमींदारी प्रथा का सृजन किया गया था जिसमें बलात श्रम, शोषण, दुर्व्यवहार जैसे कुकृत्य व्यवहार में प्रचलित हुए।

स्वाधीन भारत में यह शोषण प्रथा समाप्त हो जिससे भारत को सम तथा सामंजस्य पूर्ण बनाया जा सकें। इसी उद्देश्य को पूरा करने के लिए यह अधिकार नागरिकों को सौंपा गया। जिससे उनकी खुद पर स्वराज और संप्रभुता स्थापित हो।

शोषण के विरुद्ध अधिकार को मूल अधिकार में शामिल करने में महात्मा गांधी जी के चिंतन बहुत ही उपयोगी साबित हुई है। गांधी जी व्यक्ति की गरिमा के महत्व को दर्शाते हुए कहते हैं कि, "समाजवाद में समाज के समस्त सदस्य समान है- न कोई नीचा न कोई ऊँचा व्यक्ति के शरीर में सिर इसलिए ऊँचा नहीं है कि वह शरीर के ऊपर है ,न पैर के तलवे इस वजह से निचे है कि वे जमीन को छूते हैं। शरीर के अंग जैसे हैं वैसे ही समाज के सदस्य भी; यही समाजवाद है। उसमें राजा तथा रंक, गरीब मालिक तथा मजदूर सभी बराबर स्तर पर हैं।"[33] मजदूरों की हितों में न केवल विचार अपितु व्यवहार भी काबिले तारीफ़ है। उन्होंने स्थानीय स्तर पर चार आन्दोलन किये जो प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से मजदूरों से सम्बंधित रहा है। जिसमें चंपारण आन्दोलन(1917), अहमदाबाद आन्दोलन(1918), खेड़ा आन्दोलन(1918) और राजकोट सत्याग्रह(1939) को चलाया। उनके शब्दों में , "किसी भी प्रकार के मजबूरी में उठाये गए लाभ शोषण की श्रेणी में आता है।"

भारतीय संविधान ने पूर्णतः महात्मा गांधी जी के चिंतन को स्वीकार नहीं किया गया पर मजदूरों के भविष्य को देखते हुए कहा जा सकता है कि मजदूर और मजदूरों की व्यक्तिगत स्वराज पहले की अपेक्षा संतोषजनक है। भारत में गुणवत्तायुक्त जीवन शैली को लेकर व्यापक परिवर्तन हुए है। उसी की वजह से मजदूरों की स्थिति में काफी सुधार हुआ है। भारत में मजदूरों का शोषण तो होता है पर बंधुआ मजदूरी जैसी प्रथा अपने अस्तित्व के लिए लड़ाई लड़ रही है। यह पूर्णतया सत्य नहीं है कि कहीं पर भी बंधुआ मजदूरी और व्यक्तिगत शोषण नहीं हो रहा है पर शोषण की संख्या में कमी और शोषण के साधन में व्यापक परिवर्तन आ चूका है।

अब बाजारवाद के दौर में गरीबों की मानसिक रूप से बंधुआ बनाये जाने का प्रयास जारी है। परन्तु कहीं कहीं पर आज भी बंधुआ मजदूरी की घटनाएँ सामने आती है। गाँधी जी कई महत्वपूर्ण स्थानों पर बाजारवाद से

[33] सिंह कुमार मनोज, चौधरी कुमार शैलेश, भारतीय राजनीतिक चिन्तक-महात्मा गाँधी, pg. no. no.112

उत्पन्न की गई समस्याओं का दर्शन कराते हैं। स्पष्टः कहा जा सकता है कि महात्मा गांधी का मजदूरों के संबंध में सार्थक परिवर्तन लाने में बहुत मददगार साबित हुई है। संविधान में शोषण के विरुद्ध अधिकार देना इसकी प्रमाणिकता को सिद्ध करता है।

भारतीय संविधान के भाग-3 के अनुच्छेद-22 के अंतर्गत व्यक्ति को अधिकार दिया गया है कि व्यक्ति को अकारण गिरफ्तार नहीं किया जाएगा। जिसे हम मनमानी गिरफ्तारी से और निरोध से संरक्षण अधिनियम के नाम से जानते है। मनमानी गिरफ्तारी और निरोध के विरुद्ध जिन प्रक्रियात्मक रक्षोपाय का उपबंध किया गया है, वे हैं-

(क) किसी व्यक्ति को जो गिरफ्तार किया गया है, ऐसी गिरफ्तारी के कारणों से, यथाशीघ्र अवगत कराये बिना अभिरक्षा में निरुद्ध नहीं किया जाएगा।

(ख) किसी व्यक्ति को अपनी रूचि के विधि व्यवसायी से परामर्श करने और प्रतिरक्षा के अधिकार से वंचित नहीं किया जाएगा।

(ग) प्रत्येक व्यक्ति को जो गिरफ्तार किया गया है और अभिरक्षा में निरुद्ध रखा गया है, गिरफ्तारी के स्थान से मजिस्ट्रेट के न्यायलय तक लिए आवश्यक समय को छोड़कर ऐसी गिरफ्तारी से चौबीस घंटे की अवधि में निकटतम मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया जाएगा और ऐसे किसी व्यक्ति मजिस्ट्रेट के प्राधिकार के बिना उक्त अवधि से अधिक अवधि के लिए अभिरक्षा में निरुद्ध नहीं रखा जाएगा।[34]

यह अनुच्छेद व्यक्ति को प्रशासन के ऊपर अनावश्यक कार्यवाही के विरुद्ध संरक्षण प्रदान करता है। यह अनुच्छेद पूर्णतया शासन के निरंकुश प्रकार्य से रक्षोपाय है। महात्मा गांधी जी का इस अनुच्छेद के संबंध में प्रत्यक्ष चिंतन तो नहीं दिखाई देता पर गांधी जी के चिंतन में व्यक्ति की स्वराज स्थापित करने में यह अनुच्छेद शासकीय रूप में बहुत सहायक साबित हुआ है। व्यक्तिगत स्वतंत्रता का स्थगन करने वाली रोलेट एक्ट एक ऐसा उदहारण है जिसके खिलाफ महात्मा गांधी जी ने लड़ाई लड़ी और व्यक्तिगत स्वतंत्रता को बचाए रखें। इस विधेयक में सरकार को राजनीतिक संदेहास्पद व्यक्तियों को बिना वारंट के बंदी बनाने, देश निष्कासन करने, प्रेस पर नियंत्रण रखने तथा

[34] बसु डी.डी., भारत का संविधान, pg. no. no.114

राजनीतिक अपराधियों के विवादों की सुनवाई हेतु बिना जूरी के विशेष न्यायालयों की स्थापित करने का अधिकार प्रदान किया गया था।[35]

भारत के भविष्य में भी ऐसे निरंकुश शासन न हो या लोकतंत्र में ही ऐसा वक्त ना आये जिसमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता का हनन हो। इसलिए संविधान में व्यक्तिगत स्वतंत्रता बनाए रखने के लिए यह मूल अधिकार नागरिकों को प्रदान किया गया है। वास्तविक रूप से इस अधिकार के प्रेरणास्त्रोत महात्मा गांधी जी के द्वारा चलाये गए रालेक्ट एक्ट के खिलाफ आन्दोलन है।

भारतीय संविधान भाग-3 अनुच्छेद 25-28: अंत:करण की और धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण और प्रचार की स्वतंत्रता-

संविधान के अधीन भारत पंथनिरपेक्ष राज्य है अर्थात् ऐसा राज्य जो सभी धर्मो के प्रति तटस्थता और निष्पक्षता का भाव रखता है। पंथनिरपेक्ष राज्य इस विचार पर आधारित होता है कि राज्य का विषय केवल व्यक्ति और व्यक्ति के बीच संबंध से है व्यक्ति और ईश्वर के बीच संबंध से नहीं। यह संबंध व्यक्ति के अन्त:करण का विषय है।[36] इस अनुच्छेद में स्पष्ट कर दिया गया है कि भारत में कोई 'राज्य धर्म' नहीं होगा। राज्य कोई विशिष्ट धर्म नहीं होगा। इससे यह निष्कर्ष निकलता है- "राज्य किसी नागरिक को किसी विशिष्ट धर्म या धार्मिक संस्था की अभिवृद्धि या पोषण के लिए करों का संदाय करने के लिए बाध्य नहीं करेगा।"[37] इसके अतिरिक्त राज्य की तरफ से किसी विशिष्ट धर्म को वित्त पोषण नहीं किया जाएगा। "राज्य से वित्त प्राप्त करने वाली धार्मिक शिक्षा संस्था में शिक्षा लेने के लिए यदि विद्यार्थी अवयस्क है तो उसके संरक्षक के सहमति बिना बाध्य नहीं किया जाएगा।"[38]

"उपयुक्त परिसीमाओं में के रहते हुए भारत में प्रत्येक व्यक्ति को न केवल धार्मिक विश्वास का, बल्कि ऐसे विश्वास स जुड़े हुए आचरण का और अपने विचारों का दुसरों को उपदेश देने का अधिकार है।"[39]

---

[35] http://navratnamandusiya.blogspot.in/2011/09/rowlatt-act.html

[36] बसु डी.डी., भारत का संविधान, pg. no. no.119

[37] भारत का संविधान अनुच्छेद 27

[38] भारतीय संविधान, 28-अनुच्छेद

[39] बसु डी.डी., भारत का संविधान, pg. no. no.120

यह अधिकार लोगों को अपने संप्रदाय को आचरित और विस्तारित करने की स्वतंत्रता प्रदान करता है। इसका महत्व तब है जब कोई शासन या धर्म जैसे व्यक्तिगत क्रिया को नियंत्रित करें। उस वक्त के लिए इस अधिकार की प्रासंगिकता बढ़ जाती है जब कोई सरकार किसी विशिष्ट संप्रदाय को विशिष्ट तरीके से संश्रय प्रदान करें। भविष्य में इस प्रकार की समस्या उत्पन्न न हो इसलिए ये मूल अधिकार नागरिकों को प्राप्त है। प्रत्येक व्यक्ति को धर्म के मानने, आचरण करने, और प्रचार करने का अधिकार तो है ही प्रत्येक धार्मिक सम्प्रदाय या उसके विभाग को-

(क) धार्मिक या पुर्त प्रयोजनों के लिए संस्थाओं की स्थापना या पोषण का

(ख) अपने धर्म विषयक कार्यों का प्रबंधन करने का

(ग) जंगम या स्थावर संपत्ति के अर्जन और स्वामित्व का, ऐसी संपत्ति का विधि के अनुसार प्रशासन करने का अधिकार है।[40]

भारतीय संविधान भाग-3 अनुच्छेद 25-28:- में प्राप्त मूल अधिकारों का विश्लेषण और व्याख्या करने पर स्पष्ट होता है कि गांधी जी का चिंतन प्रकाश इसको भी प्रकाशित किये हुए है। गांधी जी धर्म और मजहबों का विश्लेषण करते हुए कहते हैं कि, "मेरी यह दिली ख्वाहिश है कि इन्सान इन्सान के बीच इस तरह का भाई चारा कायम हो जिसमें हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी और यहूदी सब एक समान शामिल हो, क्योंकि मुझे दुनिया के सब बड़े-बड़े मजहबों की बुनियादी सच्चाई में विश्वास है। मुझे यकीन है कि यह सब मजहब ईश्वर के दिए हुए है और उन लोगों के लिए जरुरी थे जिन्हें ये ईश्वर से मिले। मुझे इस बात का भी यकीन कि अगर हम अलग-अलग मजहबों के मानने वालों की निगाह से पढ़े तो हमें पता चलेगा कि सब मजहबों की जड़ एक है।"[41]

यह बहुआयामी कथन स्पष्ट करता है कि महात्मा सर्वधर्म समभाव और धारण योग्य धर्म में अटूट श्रद्धा रखते थे। उन्होंने विभिन्न धर्मों को एक ही जड़ की उत्पत्ति बताया जो सभी धर्मों के प्रति व्यापक दृष्टिकोण स्थापित करने में बहुत मददगार है। भविष्य में होने वाले सांप्रदायिक विवाद को सुलझाने में रामबाण साबित हो सकती है। गांधी जी स्वराज को स्थापित करने को लेकर काफी प्रयासरत थे। जिसमें कहते हैं कि व्यक्ति का उसके मन पर

[40] बसु डी.डी., भारत का संविधान, pg. no. no.120

[41] पाण्डेय बी.एन., गांधी महात्मा समग्र चिंतन, pg. no. no.132

नियंत्रण ही उसका स्वराज है। गांधी जी धर्म को व्यक्तिगत नहीं मानते थे। "वे इसे अपनी सामजिक गतिविधियों का विस्तार मानते थे। उनके अनुसार समस्त मानवता से तादात्म किये बगैर वे धार्मिक जीवन नहीं व्यतीत कर सकते हैं। जब तक व्यक्ति धार्मिक न हो उसे राजनीति में हिस्सा नही लेना चाहिए।"[42]

भारतीय संविधान भाग-3 अनुच्छेद 29-30: संस्कृति और शिक्षा का अधिकार- "अनुच्छेद 29 के अनुसार भारत के प्रत्येक नागरिक को अपनी विशेष भाषा, लिपि, या बनाये रखने का अधिकार होगा। यह अधिकार केवल उन नागरिकों को प्रदान किया गया है जो, भाषा, लिपि या संस्कृति की दृष्टि से अल्पसंख्यक है।"[43] अनुच्छेद-29 के तहत भारत में उन नागरिकों को संरक्षण प्रदान किया गया है जो संख्या की दृष्टि से अल्पसंख्यक हैं। इस अनुच्छेद में प्रावधान किया गया है कि अल्पसंख्यकों की संस्कृति, शिक्षा, लिपि आदि का सरकार विशेष ध्यान देगी। सरकार बहुसंख्यकों के हितों के साथ-साथ उन बहुआयामी विविधताओं जो अपने आप में अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहे की संरक्षण और उन्हें अस्तित्व में बनाये रखने के लिए सकारात्मक प्रयास करेंगी।

अनुच्छेद-29 के खंड(2) के अनुसार राज्य द्वारा पोषित अथवा राज्य निधि से सहायता पाने वाले किसी शिक्षण संस्थान में प्रवेश किसी नागरिक को मात्र धर्म, मूलवंश, जाति, भाषा अथवा इसमे किसी एक आधार पर वंचित नहीं किया जाएगा।[44] खंड(2) को शामिल करने का उद्देश्य है कि अल्पसंख्यक होने के नाते उसका महत्व भारत में संवैधानिक दृष्टि से गौण नहीं है। उनका भी भारत में वही महत्व है जो भारत की मुख्य धारा में में रहने वाले लोगों की है। यदि कोई संस्थान विभेद करता है तो उसके खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही की जा सकती है।

हालांकि यह अधिकार अनुच्छेद 15(1) में प्रदान किया गया था लेकिन, "अनुच्छेद 29(2) एवं अनुच्छेद 15(1) में अंतर है। अनुच्छेद 15 (1) में केवल राज्य के विरुद्ध संरक्षण, सामान्य रूप से विभेद के विरुद्ध संरक्षण तथा सभी नागरिकों/अल्पसंख्यकों या बहुसंख्यकों पर लागू है। जबकि अनुच्छेद 29(2) में राज्य तथा अन्य संस्थाओं के विरुद्ध भी संरक्षण एक विशेष प्रकार का सरंक्षण जैसे शिक्षा संस्थाओं के प्रवेश के मामले में, नागरिकों के राज्य पोषित या राज्यनिधि से सहायता प्राप्त शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश पाने के विशेष अधिकार से

[42] सिंह कुमार मनोज, चौधरी कुमार शैलेश, भारतीय राजनीतिक चिन्तक-महात्मा गाँधी, pg. no. no.201
[43] मंगलानी, डा. रूपा,. भारतीय शासन एवं राजनीति pg. no. no.152
[44] मंगलानी, डा. रूपा,. भारतीय शासन एवं राजनीति pg. no. no.152

सम्बंधित है। अनुच्छेद 15(1) में लिंग एवं जन्मस्थान के आधार पर विभेद का निषेध है जबकि अनुच्छेद29(2) में इसमें से किसी आधार का उल्लेख नहीं है।[45]

इस प्रकार स्पष्ट है कि अनुच्छेद 29(2) का प्रावधान किसी विशिष्ट समूहों को संरक्षण देने के लिए किया गया है। इस तरह संविधान अपनी व्यापकता के साथ-साथ व्यापक पहल लिए हुए है जिसके दायरे में भारत के दूर दराज इलाके, संस्कृति, भाषा, लिपि, बोली आदि को आधिकारिक रूप से संरक्षण दिए हुए है।

यह चिंतन स्वाधीन भारत की ही नहीं है बल्कि इसका चिंतन महात्मा गांधी जी इसके संबंध में अपनी चिंता व्यक्त की थी।

यदि इस अनुच्छेद-29 को गांधी चिंतन की कसौटी पर कसें तो स्पष्ट होगा कि , "भील, गौड़ और ऐसे ही दुसरे लोगों के लिए, जिन्हें पहाड़ी या जंगली जातियों- जिसे अनेक जुदा-जुदा नामों से पुकारा जाता है, गढ़े गए इस शब्द का अक्षरशः अर्थ देश के असली निवासी होता है, जानता हूँ कि यह ठक्करबापा का बनाया हुआ शब्द है।"[46]

आदिवासियों की महत्ता पर प्रकाश डालकर महात्मा गांधी जी ने इन्हें ही वास्तविक भारतीय बताया और इनमें पाए जाने वाले स्वराज की चर्चा भी की है। देश में अल्पसंख्यक आदिवासियों की ऐतिहासिकता और उनमें उनके लिए स्थापित बनावट, संस्कृति, बोली, भाषा, के प्रति सचेत करते हुए गांधी जी उनके संरक्षण की हिमाकत करते हैं।

उन्हीं के शब्दों में, "आदिवासियों की सेवा भी रचनात्मक कार्यक्रम का एक अंग है। इस कार्यक्रम के जुदा-जुदा अंगों की चर्चा करते करते उनके ठेठ सोलहवां नंबर लगा है, लेकिन इससे कोई उनके महत्व को कम न समझें। हमारा देश इतना विशाल है और उसमें बसने वाली जातियां इतनी विविध है कि अपने देश के सभी निवासियों के और उनकी दशा के बारे में हममें सब में अच्छे से अच्छे लोग भी जितना उन्हें जानना चाहिए उतना सब नहीं जान पाते। अगर हमारे राष्ट्र में रहने वाली हर एक इकाइयों को इस बात से सजग भान न हो कि बाकी के दुसरे घटकों या इकाइयों के सुख-दुःख उसके अपने सुख-दुःख है और हम सब एक है तो अपने देश की विशालता

---

[45] मंगलानी, डा. रूपा,. भारतीय शासन एवं राजनीति pg. no. no.153

[46] गाँधी जी, रचनात्मक कार्यक्रम, pg. no. no.42

और विविधता की यह बात ज्यों-ज्यों हमारी समझ आती है त्यों-त्यों अपनी राष्ट्रीयता के दावे को साबित करने का काम कितना कठिन है इसका ख्याल होता जाता है।"[47] इस कथन के माध्यम से भारतीयों को बताते हैं कि अल्पसंख्यक आदिवासियों के बिना हमारी विशाल भारत की बात धरी की धरी है।

गांधी जी चिंतन व्यक्त करते हैं कि वे हमसे किसी प्रकार अलग नहीं है। जो उन्हें अलग मानते है उन्हें भारत की कोई वास्तविकता से कोई सरोकार नहीं है। गांधी जी हिदायत देते है कि हमें उनसे दूर नहीं होना चाहिए बल्कि हमें उनके पास जाकर मेल-जोल बढ़ने के साथ-साथ उनकी प्रमुख समस्या के प्रति हमारी दृष्टिकोण सकारात्मक रूप से कार्य करनी चाहिए। इस प्रकार से स्पष्ट है कि अनुच्छेद 29(2) भी गांधी जी के चिंतन परिधि से ही आलोकित होता है।

भारतीय संविधान भाग-3 अनुच्छेद-30: शिक्षा संस्थाओं की स्थापना और उनका प्रबंधन करने का अल्पसंख्यक वर्गों का अधिकार

यह अनुच्छेद-30 अनुच्छेद-29 को विस्तार देने का प्रयास करता है। अनुच्छेद-29 में दिए गए अधिकारों को ठीक तरीके से लागू करने का अधिकार नागरिकों को दिया है। अनुच्छेद-29 राज्य को आदेश देता है पर अनुच्छेद 30 नागरिकों को अपने भाषा, शिक्षा, संस्कृति आदि को विस्तार देने के लिए और भविष्य के लिए सुरक्षित रखने का अधिकार अधिकारित करता है।

अनुच्छेद 30 में कहा गया है कि धर्म या भाषा पर आधरित सभी अल्पसंख्यक वर्गों को अपनी रूचि की शिक्षा संस्थाओं की स्थापना और उनके प्रबंध का अधिकार होगा। 44वें संशोधन के द्वारा जोड़े गए खंड(क) में उपबंध किया गया है कि यदि किसी ऐसी संस्था की संपत्ति अर्जित की जाती है, तो उसका उचित तथा पर्याप्त मुआवजा दिया जाएगा। ताकि इस अधिनियम द्वारा दिया अधिकार सार्थक बना रहें। खंड(2) में उपबंध किया गया है कि सहायता देने के मामले में राज्य अल्पसंख्यकों द्वारा प्रतिबंधित संस्थाओं के साथ विभेद नहीं करेगा।"[48]

---

[47] गाँधी जी, रचनात्मक कार्यक्रम, pg. no. no.42

[48] कश्यप सुभाष, हमारा संविधान, pg. no. no.116

अध्याय-3

राज्य के नीति निदेशक तत्व एवं गांधी चिंतन

भारतीय संविधान की अनूठी विशेषता है कि इसमें राज्य के नीति-निदेशक को शामिल किया गया है। संविधान के इस हिस्से को शामिल करने के लक्ष्य में कहा जाता है कि "भारतीय संविधान के भाग 4 में अनुच्छेद 36 से 51 तक में अंतर्बिष्ट इन निदेशक तत्वों में संविधान उद्देश्य तथा सामजिक न्याय के दर्शन का वास्तविक तत्व निहित है। आयरलैंड के संविधान से अभिप्रेरित होकर संविधान में शामिल किये गये गए निदेशक तत्वों में उन उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को घोषित किया गया है जिसका अनुपालन करना राज्य का दायित्व है।[49]

नीति-निदेशक तत्व भारत में व्यावहारिक तौर पर सामाजिक सुधार और आर्थिक समृद्धि के लिए संविधान में सम्मिलित किया गया है। हालांकि नीति-निदेशक तत्वों का स्त्रोत आयरलैंड का संविधान रहा है। जिसमें राज्य का उत्तरदायित्व होता है कि समाज में राजनैतिक पक्ष ही नहीं अपितु अन्य पक्षों जिसमें सामाजिक और आर्थिक पक्ष शामिल है, में न्याय और लोकतांत्रिक व्यवहार को व्यवहारित करने का प्रयास करेगा।

राज्य का उत्तरदायित्व होता है कि समाज में ऐसी व्यवस्था स्थापित करें जिसमें व्यक्ति, व्यक्ति गरिमा, व्यक्तित्व विकास को साकारित कर सकेंगे। समाज में लोककल्याण की भावना विकसित हो। समाज की प्राकृतिक असमानता को न तो समाप्त किया जा सकता है और न ही अप्राकृतिक असमानता को पूर्णतया समाप्त नहीं किया जा सकता है। असमानता का किसी पर बुरा असर न पड़ें और न ही किसी के शोषण का माध्यम बनें। शोषण की परिस्थितियों को समाप्त करने का दायित्व राज्य के पास नीति-निदेशक तत्वों से प्राप्त होता है।

राज्य का लक्ष्य है कि सामान्यजनों को सुख एवं समृद्धि के साथ-साथ व्यष्टि एवं समष्टि उन्नति के लिए अवसर प्रदान करेगा। संविधान में हर एक अनुच्छेद का कुछ निश्चित उद्देश्य होता है उसी प्रकार संविधान में संकलित राज्य के नीति-निदेशक तत्वों के भी कुछ निश्चित उद्देश्य है जो इसकी प्रासंगिकता को सुनिश्चित करती है। राज्य के नीति-निदेशक तत्वों के उद्देशों को स्पष्ट करने के लिए डा. राजेंद्र प्रसाद के शब्दों में, राज्य के नीति निदेशक सिद्धांतों का मुख्य उद्देश्य जनता के कल्याण को प्रोत्साहित करने वाली सामाजिक व्यवस्था का निर्माण

[49] मंगलानी, डा. रूपा,. भारतीय शासन एवं राजनीति pg. no. 165

करना है।"[50] डा. राजेन्द्र प्रसाद जनता के कल्याण के लिए राज्य को साधन मानते हैं और भारत की सामाजिक व्यवस्था को साध्य मानते हैं। क्योंकि राज्य के कार्य का उद्देश्य सामान्य जनता के हित हैं।

इसके उद्देश्यों की व्यापकता को समझाते हुए संविधान विशेषज्ञ सुभाष कश्यप के अनुसार "नीति-निदेशक तत्वों के लिए मूल प्रेरणा कल्याणकारी राज्य की संकल्पना से हुई है। व्यक्ति के मूल अधिकारों की रक्षा के साथ संविधान निर्माता यह भी चाहतें थें कि हमारा संविधान सामाजिक क्रांति के लिए एक प्रभावी साधन बनें।

भाग-4 के नीति-निदेशक तत्वों में जिन आर्थिक एवं सामाजिक लक्ष्यों को निर्धारित किया गया था उनको पालन करने का प्रयास राज्य को करना है।"[51]

प्रस्तुत कथन में सामाजिक क्रांति का साधन बनाने की संकल्पना को तैयार करने का साधन बताया गया है। जिसमें राज्य के लक्ष्य को अभिनिर्धारित किया गया है।

डा. अम्बेडकर संविधान निर्मात्री सभा में नीति-निदेशक तत्वों में अंतर्निहित उद्देश्यों के बारे में संबोधित करते हुए स्पष्टीकरण देते हैं जिसमें निम्नलिखित विचार व्यक्त किये थे कि- "हमारा संविधान संसदीय प्रजातंत्र की स्थापना करता है। संसदीय प्रजातंत्र से तात्पर्य है- एक व्यक्ति एक वोट। हमारा तात्पर्य है कि प्रत्येक सरकार अपने प्रतिदिन के कार्यों-कलापों में तथा एक विषय के अंत में, जबकि मतदाताओं और निर्वाचक-मंडल की सरकार के द्वारा किये गए कार्यों का मूल्यांकन करने का अवसर मिलता है, कसौटी पर कसी जायेगी। राजनीतिक लोकतंत्र की स्थापना का उद्देश्य यह है कि हम कुछ निश्चित लोगों को यह अवसर न दें कि वे निरंकुशवाद को कायम रख सकें। जब हमने राजनीतिक लोकतंत्र की है तो हमारी यह इच्छा है कि आर्थिक लोकतंत्र का आदर्श भी स्थापित करें।

प्रश्न यह है कि क्या हमारे पास कोई निश्चित तरीका है जिससे हम आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना कर सकतें हो? विभिन्न ऐसे तरीके हैं जिसमें लोगों का विशवास है कि आर्थिक लोकतंत्र लाया जा सकता है। बहुत से लोग है जो व्यक्तिगत उत्कर्ष को सबसे अच्छा आर्थिक लोकतंत्र समझतें है, और बहुत से लोग समाजवादी समाज की स्थापना को सबसे अच्छा लोकतंत्र मानते हैं; और बहुत से लोग कम्युनिज्म की स्थापना को सर्वोत्तम आर्थिक समाजवाद का रूप मानते हैं। इस तथ्य पर ध्यान देते हुए कि आर्थिक लोकतंत्र लाने के विभिन्न तरीके है; हमने जो

---

[50] मंगलानी, डा. रूपा,. भारतीय शासन एवं राजनीति pg. no. 165

[51] कश्यप सुभाष, हमारा संविधान, pg. no. 124

भाषा प्रयुक्त की है, उसमें जानबूझ कर नीति-निदेशक तत्वों में ऐसी चीज रखी है जो निश्चित या अनम्य नहीं है। हमने इसलिए विविध तरीकों से आर्थिक लोकतंत्र के आदर्श तक पहुँचने के लिए चिन्तनशील लोगों के लिए पर्याप्त स्थान छोड़ा है। इस संविधान की रचना में हमारे वस्तुतः दो उद्देश्य है-

1. राजनीतिक लोकतंत्र का रूप निर्धारित करना।
2. यह स्थापित करना कि हमारा आदर्श आर्थिक लोकतंत्र है और इसका विधान करना कि प्रत्येक सरकार जो कोई सत्ता में हो, आर्थिक लोकतंत्र लाने का प्रयास करेंगी।

इस प्रकार से स्पष्ट है कि नीति निदेशक सिद्धांतों का मुख्य उद्देश्य विधान मंडल और कार्यपालिका तथा क्षेत्रीय और अन्य प्राधिकारों के समक्ष उपलब्धि का एक मापदंड रखना है, जिस पर उसकी सफलता और असफलता की जांच की जा सकें। यह भी आशा की गई थी कि जो इन निदेशों को कार्यान्वित करने में सफल रहें है, आम चुनाव के समय उन्हें उचित शिक्षा मिल सकती है। यह ध्यान देने की बात है कि नीति-निदेशक तत्व आर्थिक और सामाजिक आदर्श के किसी निश्चित रूप का उपबंध नहीं करते। वे केवल उन लक्ष्यों की स्थापना करते है जो समय समय पर लागू कि गई रीतियों द्वारा विभिन्न तरीकों से प्राप्त किये जा सकतें है।"[52]

अम्बेडकर के अतिरिक्त जेंनिग्स ने भी राज्य के नीति निदेशक तत्वों की आर्थिक तत्व के दर्शन करते हुए कहतें हैं कि, "अधिकांश उपबंधों के पीछे जो दर्शन है वह 'फेबियन समाजवाद' है। जिसमें से समाजवाद निकाल दिया गया है। क्योंकि उत्पादन, वितरण और विनिमय के साधनों के राष्ट्रीयकरण का अभाव है। यह स्पष्ट है कि 1947 में रचित हमारे संविधान में कोई विशिष्टवाद नहीं था। इसमें व्यक्तिवाद और समाजवाद के बीच सामंजस्य स्थापित करने के लिए अनियंत्रित प्राइवेट उद्दम और हित के दुर्गुणों को सामाजिक नियंत्रण और कल्याणकारी उपायों द्वारा मिटाने का यथा संभव प्रयत्न किया गया था।"[53]

प्रस्तुत कथन में जेंनिग्स यह बताने का प्रयत्न करतें हैं कि भारतीय संविधान की निश्चित विचारधारा का पोषक, समर्थक या अनुयायी नहीं है अपितु संविधान विभिन्न विचारधाराओं में मुख्यतः उदारवाद और समाजवाद के मध्य सामंजस्य स्थापित करने का प्रयत्न किया है। ताकि सभी के साथ उचित न्याय स्थापित हो सकें।

---

[52] पाण्डेय राजनारायण, भारत का संविधान, pg. no. 387

[53] बसु डी.डी., भारत का संविधान, pg. no. 152

राज्य के नीति निदेशक तत्वों की विचारधारा को स्पष्ट करते हुए नेहरू कहते हैं कि,

"हमारी योजना का 'समाज का समाजवादी ढांचा' घोषित किया था, समाजवाद नहीं।"

"कुछ लोगों के लिए समाजवाद का दो अर्थ है; वितरण जिसका अर्थ है जिसके पास अत्यधिक धन है उसकी जेबें खली करना और सुव्यवस्थीकरण। ये दोनों वांछनीय उद्देश्य है किन्तु ये अपने आप में समाजवाद नहीं है।"

उत्पादन के तंत्र पर प्रभाव डालकर वितरण करने का प्रयत्न गलत कदम होगा। ऐसा करके हम अपने आपको कमजोर करेंगे। समाजवाद का आधार धन वृद्धि, निर्धनता का समाजवाद नहीं होता। अतएव समानता लाने की प्रक्रिया चरणों में की जानी चाहिए।

दूसरा प्रश्न राष्ट्रीयकरण का है। मै समझता हूँ कि जब तक हम राष्ट्रीयकरण करके किसी काम को ठीक चलाने के लिए तैयार नहीं है। तब तक राष्ट्रीयकरण का खतरा मोल लेना होगा। राष्ट्रीयकरण के लिए हमें कुछ वस्तुओं को चुनना होगा। मेरी समाजवाद की कल्पना यह है कि राज्य में प्रत्येक व्यक्ति को प्रगति के समान अवसर प्राप्त हों।"[54]

प्रस्तुत कथन में नेहरू जी अपनी दुविधा को व्यक्त करते हुए कहते हैं कि पूर्ण समाजवाद देश के लिए स्वास्थ्यवर्धक न होगा और न पूर्ण उदारवाद लोगों की वास्तविक समस्या सुधार में सफलता प्राप्त करेगा। इसलिए भारत जैसे विविधता और बहुआयामी प्रधान देश में कोई एक विचारधारा में की कार्यवाही पर प्रश्न उठना लाजीमी है।

क्योंकि यहाँ के लोगों की समस्या एक नहीं अपितु अनेक है। जिन्हें लेखबद्ध करना आसान कार्य नहीं है। क्योंकि यहाँ पर हर एक कदम पर हितों के टकराव की स्थिति बनी रहती है।

राज्य के नीति-निदेशक तत्व-

अनुच्छेद-36: परिभाषा- इस भाग में, जब तक की सन्दर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, "राज्य" का वही अर्थ है जो भाग-3 में है।

[54] बसु डी.डी, भारत का संविधान, pg. no. 153

अनुच्छेद-37: इस भाग में अंतर्बिष्ट तत्वों का लागु होना- इस भाग में अंतर्बिष्ट उपबंध किसी न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय नहीं होंगे किन्तु फिर भी इसमें अधिकथित तत्व देश के शासन में मूलभूत है और विधि बनाने में इन तत्वों को लागु करना, राज्य का कर्तव्य होगा।

अनुच्छेद-38: राज्य लोककल्याण की अभिवृद्धि के लिए सामाजिक व्यवस्था बनाएगा-

1. राज्य ऐसी सामाजिक व्यवस्था की, जिसमें सामाजिक, आर्थिक, और राजनैतिक न्याय, राष्ट्रीय जीवन की संस्थाओं को अनुप्रमाणित करें, भरसक प्रभावी रूप में स्थापना और संरक्षण करके लोककल्याण की अभिवृद्धि का प्रयास करेगा।
2. राज्य, विशिष्टतया, आय की असमानताओं को कम करने का प्रयास करेगा और न केवल व्यष्टियों के बीच बल्कि विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले और विभिन्न व्यवसायों में लगे हुए लोगों के समूहों के बीच भी प्रतिष्ठा, सुविधाओं और अवसरों की समानता समाप्त करने का प्रयास करेगा।

अनुच्छेद-39: राज्य द्वारा अनुसरणीय कुछ नीति तत्व- राज्य अपनी नीति का विशिष्टतया, इस प्रकार सञ्चालन करेगा कि सुनिश्चित रूप से-

(क) पुरुष और स्त्री सभी नागरिकों को समान रूप से जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हो;

(ख) समुदाय के भौतिक संसाधनों के स्वामित्व और नियंत्रण इस प्रकार बंटा हो जिससे सामूहिक हित का सर्वोत्तम रूप से साधन हो;

(ग) आर्थिक व्यवस्था इस प्रकार चलें जिससे धन और उत्पादन-साधनों का सर्वसाधारण के लिए अहितकारी संकेन्द्रण न हो;

(घ) पुरुषों और स्त्रियों दोनों का समान कार्य के लिए समान वेतन हो;

(च) पुरुष और स्त्री कामगारों के स्वास्थ्य और शक्ति का तथा बालकों की सुकुमार अवस्था का दुरुपयोग न हो और न आर्थिक आवश्यकता से विवश होकर नागरिकों को ऐसे रोजगारों में न जाना पड़े जो उसकी शक्ति और आयु के अनुकूल न हो;

(छ) बालकों को स्वतंत्र और गरिमामय वातावरण में स्वस्थ विकास के अवसर और सुविधाएँ दी जाए और बालकों और अल्पवय

अनुच्छेद-39 (क): समान न्याय और निःशुल्क विधिक सहायता- राज्य यह सुनिश्चित करेगा कि विधिक तंत्र इस प्रकार काम करें कि समान अवसर के आधार पर न्याय सुलभ हो और वह, विशिष्टतया, यह सुनिश्चित करने के लिए कि आर्थिक या किसी अन्य निर्योग्यता के कारण कोई नागरिक न्याय प्राप्त करने के अवसर से वंचित न रह जाए, उपयुक्त विधान या स्कीम द्वारा या किसी अन्य रीती से निःशुल्क विधिक सहायता की व्यवस्था करेगा।

अनुच्छेद-40- ग्राम पंचायतों का गठन- राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन करने करने के लिए कदम उठाएगा और उसको ऐसी शक्तियां और प्राधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने की योग्य बनाने के लिए आवश्यक हो।

अनुच्छेद-41- कुछ दशाओं में काम, शिक्षा और लोक सहायता पाने का अधिकार- राज्य अपनी आर्थिक सामर्थ्य और विकास की सीमाओं के भीतर, काम पाने के, शिक्षा पाने के और बेकारी, बुढ़ापा, बीमारी, और निःशक्तता तथ अन्य अनर्ह अभाव की दशाओं में लोक सहायता पाने के अधिकार को प्राप्त कराने का प्रभावी उपबंध करेगा।

अनुच्छेद- 42- काम की न्याय संगत और मानवोचित दशाओं तथा प्रसूति सहायता का उपबंध- राज्य काम की न्यायसंगत और मानवोचित दशाओं को सुनिश्चित करने के लिए और प्रसूति सहायता के लिए उपबंध करेगा।

अनुच्छेद-43- कर्मकारों के इए निर्वाह मजदूरी आदि- राज्य, उपयुक्त विधान या आर्थिक संगठन द्वारा या किसी अन्य रीती से कृषि के, उद्योग के या अन्य प्रकार के सभी कर्मगारों को काम निर्वाह मजदूरी, शिष्ट जीवन स्तर और अवकाश का सम्पूर्ण उपभोग सुनिश्चित करने वाली काम की दशाएं तथा सामाजिक और सांस्कृतिक अवसर प्राप्त कराने का प्रयास करेगा और विशिष्टतया ग्रामों में कुटीर उद्योगों की वैयक्तिक या सहकारी आधार बढ़ाने का प्रयास करेगा।

अनुच्छेद-43(क)- उद्योगों के प्रबंध में कर्मगारों का भाग लेना- राज्य किसी उद्योग में लगे हुए उपक्रमों, स्थापनों या अन्य संगठनों के प्रबंध में कर्मगारों का भाग लेना सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्त विधान विधान द्वारा या किसी अन्य रीती से कदम उठाएगा।

अनुच्छेद-44- नागरिकों के लिए एक समान सिविल संहिता- राज्य भारत के समस्त राज्यक्षेत्र में नागरिकों के लिए एक समान सिविल संहिता प्राप्त कराने का प्रयास करेगा।

अनुच्छेद-45- प्रारंभिक शैशवावस्था की देखरेख छः वर्ष से कम आयु के बालकों की शिक्षा का प्रावधान- राज्य प्रारंभिक शैशवावस्था की देखरेख और सभी बालकों को उस समय तक जब तक कि वे छः वर्ष की आयु पूर्ण न कर लें। शिक्षा प्रदान के लिए प्रयास करेगा।

अनुच्छेद-46- अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य दुर्बल वर्गों के शिक्षा और अर्थ सम्बन्धी हितों की अभिवृद्धि – राज्य जनता के दुर्बल वर्गों के, विशिष्टतया, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों के शिक्षा और अर्थ सम्बन्धी हितों की विशेष सावधानी से अभिवृद्धि करेगा और सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से उनकी संरक्षा करेगा।

अनुच्छेद-47- पोषाहार स्तर और जीवन स्तर को ऊँचा करने तथा लोक स्वास्थ्य का सुधार करने का राज्य का कर्तव्य- राज्य, अपने लोगों के पोषाहार स्तर और जीवन स्तर को ऊँचा करने और लोक स्वास्थ्य के सुधार को अपने प्राथमिक कर्तव्यों में मानेगा और राज्य, विशिष्टतया, मादक पेयों और स्वास्थ्य के लिए हानिकर औषधियों के, औषधीय प्रयोजनों से भिन्न, उपभोग का प्रतिशेध करने का प्रयास करेगा।

अनुच्छेद- 48- कृषि और पशुपालन का संगठन- राज्य कृषि और पशुपालन को आधुनिक और वैज्ञानिक प्रणालियों से संगठित करने का प्रयास करेगा विशिष्टतया गायों और बछड़ों तथा अन्य दुधारू और वाहक पशुओं की नस्लों के परिरक्षण और सुधार के लिए और उनके वध का प्रतिषेध करने के लिए कदम उठाएगा।

अनुच्छेद-48- (क) पर्यावरण का संरक्षण तथा संवर्धन और वन तथा वन्य जीवों की रक्षा- राज्य देश के पर्यावरण के संरक्षण तथा संवर्धन का और वन तथा अन्य जीवों की रक्षा करने का प्रयास करेगा।

अनुच्छेद-49: राष्ट्रीय महत्व के संस्मारकों, स्थानों और वस्तुओं का संरक्षण- राष्ट्रीय महत्व वाले घोषित किये गए कलात्मक या ऐतिहासिक अभिरुचि वाले प्रत्येक संस्मारक या स्थान या वस्तु का, यथास्थिति, लुंठन, विरूपण, विनास, अपसारण, व्ययन या निर्यात से संरक्षण करना राज्य की बाध्यता होगी।

अनुच्छेद-50: कार्यपालिका से न्यायपालिका का पृथक्करण- राज्य की लोक सेवाओं में, न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक करने के लिए राज्य कदम उठाएगी।

अनुच्छेद-51: अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा की अभिवृद्धि – राज्य-

(क) अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा की अभिवृद्धि का,

(ख) राष्ट्रों के वीच न्यायसंगत और सम्मानपूर्ण संबंधों को बनाये रखने का,

(ग) संगठित लोगों के एक दुसरे से व्यवहारों में अंतर्राष्ट्रीय विधि और संधि-बाध्यताओं के प्रति आदर बढ़ाने का, और

(घ) अंतर्राष्ट्रीय विवादों के माध्यस्थम द्वारा निपटारे के लिए प्रोत्साहन देने का प्रयास करेगा।

गांधी जी दृष्टि में राज्य के नीति निदेशक तत्व

अनुच्छेद-38: में राज्य को यह दायित्व दिया गया है कि राज्य लोक कल्याण की अभिवृद्धि के लिए कार्य करेगा। इस अनुच्छेद के अंतर्गत सामाजिक, आर्थिक, न्याय आदि का जिक्र किया गया है। राष्ट्रीय जीवन की संस्थाओं को व्यावहारिक रूप से जीवंत और प्रासंगिक बनाये रखने में उत्तरदायित्व का निर्वाह करेगा। अनुच्छेद-38 को अगर गांधी जी के चिंतन की कसौटी पर कसा जाए तो स्पष्ट होगा कि इन चुनौतीपूर्ण उत्तरदायित्व का स्त्रोत गांधी जी के मूल्य और चिंतन रहे हैं।

सामाजिक न्याय को गांधी जी शब्दों में तराशा जाए तो स्पष्ट होगा कि गांधी जी का सामाजिक न्याय भारत में व्याप्त अन्याय के खिलाफ एक आवाज थी। वे स्त्रियों के संबंध में कहते हैं कि, "स्त्री जाति में छिपी हुई अपार शक्ति उसकी विद्वता अथवा शरीर बल की बदौलत नहीं है इसका कारण उसके भीतर भरी हुई उत्कट श्रद्धा, भावना का वेग और अत्यंत त्याग शक्ति है। वह स्वभाव से ही कोमल और धार्मिक वृत्ति वाली होती है, और पुरुष

जहाँ श्रद्धा खोकर ढीला पड़ जाता है, अथवा झूठे हिसाब लगाने में उलझा रहता है, वहां वह सीधे धीरज रखकर सीधे रास्ते पर स्थिर भाव से बढती है।"[55]

इस कथन में गांधी जी स्वभाव व सच्चरित्रता के दृष्टिकोण से स्त्रियों को पुरुषों से बेहतर बताने का प्रयास करते हैं। जिसमें स्त्रियों की महत्ता समाज को बताने का प्रयास करतें हैं। वे स्त्रियों के अधिकार का जिक्र करते हुए कहते हैं कि, "वयःप्राप्त पुरुष जितनी स्वतंत्रता अधिकारी हैं उतनी ही स्वतंत्रता की अधिकारिणी स्त्री भी हैं।"[56] इस कथन से स्पष्ट है कि गांधी जी स्त्रियों को समाज में वो सम्मान और अधिकार देना चाहते हैं जिसकी वो मानव होने के नाते हकदार है। स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद राज्य अपने दायित्व में व्यापकता लाकर गांधी चिंतन के रास्ते पर अग्रसारित है।

सामाजिक न्याय के अंतर्गत गांधी जी ने वर्ण व्यवस्था का समर्थन तो किये पर समय के साथ कमियों को चिन्हित करके सुधार करने का प्रयास किये। क्योंकि वर्ण व्यवस्था में आयी कमियां समाज में शोषण का माध्यम बन रही थी। गांधी जी अस्पृश्यता की आलोचना और उसके कारण समाधान को बताने के लिए कहते हैं कि, "इसमें शक नहीं है कि उस स्वराज तक पहुँचने का रास्ता सीधी चढ़ाई वाला और संकरा है। उस रास्ते पर ना जाने कितनी फिसलनी चढ़ाईयां है और न जाने कितनी खाईयां है। लेकिन ठेठ चोटी पर पहुँचकर आजादी की सांस लेने के लिए हमें इन तमाम चढ़ाईयों और खाईयों को बिना डिगे, मजबूत कदम,के साथ पार करना होगा।"[57]

इस कथन के अनुसार गांधी जी ने व्यापक सुधार की व्यूह रचना खिंची है। इस व्यूह रचना में आवश्यकता पड़ने वाली समर्पण की भावना को सशर्त सुनिश्चित किया गया है। साथ ही समाज पर भविष्य में पड़ने वाले प्रभाव का भी संकेत प्रस्तुत किया गया है। आदि को प्रासंगिक करने का दायित्व नीति-निदेशक तत्व के माध्यम से राज्य और संविधान पर आ गया है। जिसका निर्वाह करने में राज्य और संविधान व्यवहरित है।

अनुच्छेद-38[2]: में संकलित किया गया है कि राज्य आर्थिक समानता लाने के लिए प्रयासरत रहेगा। इस खंड में संकलित है कि राज्य, अवसर, प्रतिष्ठा, सुविधाओं प्रदान करने में किये जा रहे असमानता को समाप्त करने का प्रयास करेगा। इस खंड को गांधी जी के चिंतन कोष में देखा जाए तो स्पष्ट होगा कि, "मेरे सपनों का स्वराज गरीबों

---

[55] मशरूवाला घ. किशोरलाल, गाँधी विचार-दोहन, pg. no. 41

[56] मशरूवाला घ. किशोरलाल, गाँधी विचार-दोहन, pg. no. 40

[57] गाँधी जी, रचनात्मक कार्यक्रम, pg. no. 15

का स्वराज है। जीवन की अनिवार्य वस्तुएं तुम्हें भी उसी प्रकार उपलब्ध होनी चाहिए जिस प्रकार राजा और धनवानों को उपलब्ध है। लेकिन इसका अर्थ नहीं है कि तुम्हारे पास उन जैसे महल होंगे। सुखी जीवन के लिए आवश्यक नहीं है। तुम या मैं तो उसमें खो जायेंगे। लेकिन तुम्हें जीवन की वे सभी सामान्य सुख सुविधाएँ मिलनी चाहिए जो एक धनी व्यक्ति को उपलब्ध है। मुझे तनिक भी संदेह नहीं हो रहा कि जब तक तुम्हें उन सुख सुविधाओं की गारंटी नहीं मिलती तब तक स्वराज पूर्ण स्वराज नही माना जाएगा।"[58]

पुरुष और स्त्री के समान जीविका के पर्याप्त साधन मुहैया कराने की जिम्मेवारी राज्य को सौपी गई है। राज्य के नीति निदेशक तत्व में इसे अधिकार के रूप में उल्लेखित किया गया है। इस कथन में प्रावधान करने का प्रयास किया गया है कि राज्य की जिम्मेवारी होगी की सरकारी व निजी क्षेत्रों में होने वाली शोषण से महिलाओं की रक्षा करेगा। स्त्रीयों के कार्यों को भी उतना ही सम्मान दिया जाएगा जितना पुरुषों के। स्त्रियों को उस श्रम का उतनी ही पारिश्रमिक दिया जाएगा जितना उस श्रम का पुरुषों को दिया जाता है।

प्रावधान किया गया है कि राज्य की तरफ से होने वाले साधनों के वितरण में समानता बरती जायेगी। गांधी जी स्त्री और पुरुषों के कार्यों और क्षमता का विवेच्य करते हुए कहते हैं कि, "कानून बनाने का काम ज्यादातर पुरुषों के हाथ में रहा है, और इस स्वनिर्धारित काम करते समय पुरुष ने सदा औचित्य और विवेक से काम नहीं लिया। स्त्रियों के पुनरुद्धार का सबसे बड़ा काम यह है कि हम उन कलंकों को मिटा दें। जिन्हें हमारे शास्त्रों ने स्त्रियों के अनिवार्य और स्वभावगत लक्षण बताया है। इसे कौन करेगा? और कैसे करेगा?

मेरी विनम्र सम्मति में, इसके लिए हमें सीता, दमयंती, और द्रौपदी जैसी निर्मल, दृढ और आत्म नियंत्रित महिलायें पैदा करनी होगी। यदि यह कर सकें तो इन आधुनिक बहनों को भी वही आदर देगा, वही जो बीते युग की महान देवियों को देता आया है। उनके शब्द भी शास्त्र के समान प्रमाणिक माने जायेंगे। हम उन स्मृतियों में उन पर कहीं कहीं किये गए आक्षेपों के लिए शर्म महसूस करेंगे और जल्दी ही उन्हें भुला देंगे। हिन्दू समाज में ऐसी क्रांतियाँ पहले भी हुई है और भविष्य में भी होगी। वस्तुतः इससे को स्थिरता प्राप्त होगी। मैं स्त्री और पुरुषों में कोई भेद नहीं

[58] गाँधी जी, यंग, 1931, pg. no. 46

करता। स्त्रियों को भी पुरुषों के समान स्वयं को स्वाधीन अनुभव करना चाहिए। वीरता केवल पुरुषों की बपौती नहीं है।"[59]

प्रस्तुत कथन में गांधी जी समाज में स्त्रियों की महत्ता, मनोदशा और समाज में व्याप्त मानवता से अतृप्त स्त्रियों का जिक्र किये हुए है। अंत में बताने का प्रयास करते हैं कि महिलाएं समाज का ऐसा वर्ग नहीं है जिसे समाज के मुलभुत चीजों से वंचित रखा जाए। उन्होंने यह भी बताने का प्रयास किया कि समाज में समस्त अधिकार पर सिर्फ पुरुषों का एकाधिकार नहीं है। राज्य से वितरित होने वाले उपयोगी संसाधनों पर उनका भी बराबर का स्वामित्व है।

अनुच्छेद-39: के अंतर्गत उल्लेखित किया गया है कि राज्य ऐसी परिस्थितियों का निर्माण करेगा कि समाज में जितने भी परिव्याप्त संसाधन है उनका उपयोग किसी विशेष लोगों के लिए नहीं अपितु समाज में सर्वसाधारण लोगों के हित में उपयोग किये जाये। उसी क्रम में उल्लेखित किया गया है कि समाज की आर्थिक व्यवस्था इस प्रकार हो कि धन और उत्पादन के साधनों का संकेन्द्रण इस प्रकार न हो कि लोकहित और लोककल्याण में बाधक बनें। इसका तात्पर्य है कि कोई इतना अक्षम न हो कि वह खुद का शोषण करवाने पर मजबूर हो जाए और कोई इतना सक्षम न हो जाए कि वह किसी भी व्यक्ति का किसी हद तक शोषण कर सकें। इसके लिए राज्य को प्रयास करना चाहिए कि समाज में आर्थिक स्तर पर सामंजस्य बना रहे।

साधनों का विकेंद्रीकरण गांधी जी के सम्पूर्ण चिंतन का तना कहा जाए तो अतिशयोक्ति न होगा। गांधी जी आर्थिक संसाधनों के विकेंद्रीकरण के पक्ष में चाहतें है कि, "देश के आर्थिक संसाधनों का लोगों के बीच न्यायोचित बंटवारा हो तथा देश की दौलत में सभी नागरिकों के समुचित हिस्सेदारी मिलें, जिससे की अमीर और गरीब के बीच की खाई कम हो और कम से कम होती जाए। लेकिन गांधी जी अपने इस उद्देश्य की पूर्ति हिंसा या जोर जबरदस्ती के रास्ते से नहीं प्राप्त करेंगे। उनका विचार था कि, "देश की आर्थिक संपत्ति जो कुछ इने-गिने धनी

[59] प्रभु आर.के.- राव .यू.आर, महात्मा गांधी के विचार, 285

लोगों के हाथों में संचित है, उनका जनहित में प्रयोग करने के लिए धनी लोगों के प्रति हिंसा बरतना, उन्हें मार डालना या उनसे उनकी संपत्ति हिंसा या कानून द्वारा जबदस्ती ले लेना वांछनीय है।"[60]

इस कथन में गांधी जी के विचार स्पष्ट होते है कि वे किसी भी प्रकार के हिंसा के पक्ष में नहीं है जो उन्हें मार्क्सवाद से अलग करता है। आर्थिक समानता के परिप्रेक्ष्य में गांधी जी पूंजीपतियों से आग्रह करते हैं कि वे उतनी संपत्ति को को संरक्षित करें जितना वे उपयोग कर सकें और संपत्ति की अधिकता होने पर अपिग्रह करने का प्रयास करें।

गांधी जी कहतें हैं कि, "जब तक मुठ्ठी भर धनवानों और करोड़ों भूखे रहने वालों के बीच बेइंतेहाँ अंतर बना रहेगा तब तक अहिंसा की बुनियाद पर चलने वाली राजव्यवस्था कायम नहीं हो सकती।[61]

इस कथन में गांधी जी समाज में व्याप्त असमानता के दुष्परिणाम को इंगित किये हैं। असमानता का संबंध सिर्फ अमीर गरीब तक ही सीमित न रखकर राज्यव्यवस्था से जोड़ने का प्रयास किये हैं। असमानता से व्याप्त सामजिक, आर्थिक, राजनैतिक, दुष्पहलुओं की व्याख्या करने का प्रयास किये हैं कि असमानता हिंसक समाज एक बड़ा साधन साबित हो सकता है।

अपने आर्थिक पक्षों को विस्तृतता प्रदान करते हुए पूंजीपतियों के कुछ कर्तव्य निर्धारित करने के प्रयास किये है। गांधी जी कहतें हैं कि, "अपिग्रह का संबंध आस्तेय से है। जो माल असल में चुराया नहीं है उसे जरुरत न होने पर भी जमा करने से वह चोरी का सा माल बन जाता है। अपिग्रह के मानी है संचय या इकठ्ठा करना। सत्य की खोज करने वाला, अहिंसा करने बरतने वाला अपिग्रह नहीं कर सकता।"[62] इस कथन में गांधी जी ने अनावश्यक संचित संपत्ति को चोरी के माल से उपनामित किया है। गांधी जी ने इसे समाज के लिए अहितकर बताया है।

इसी क्रम को आगे बढ़ाते हुए कहते हैं कि, "रोज की जरूरत जितना ही रोज पैदा करने का ईश्वर का नियम हम नहीं जानते हुए भी पालते नहीं। इसलिए जगत में असमानता और उसमें से पैदा होने वाले दुःख हम भगतते हैं। अमीर के यहाँ उनको न चाहिए वैसी ही चीजें भरी पड़ी होती है, लापरवाही से खो जाती है, बिगड़ जाती है, जबकि इन्हीं चीजों की कमी के कारण करोड़ों लोग भटकते है, भूखों मरते है, ठण्ड से ठिठुर जाते है। सब लोग अगर

---

[60] रामरतन, शोभिका शारदा, गांधी जी की राजनैतिक अवधारणायें, pg. no. 147
[61] गाँधी जी, रचनात्मक कार्यक्रम, pg. no. 35
[62] गाँधी जी, मंगल-प्रभात, pg. no. 25

अपनी जरूरत की ही चीजों का संग्रह करें तो किसी को तंगी महसूस न हो और सबको संतोष हो। आज दोनों तंगी महसूस करतें हैं। करोड़पति भी अरबपति होना चाहता है फिर भी उसको संतोष नहीं होता। कंगाल करोड़पति होना चाहता है; कंगाल को भरपेट मिलने से संतोष होता हो ऐसा नहीं देखा जाता। फिर भी उसे भरपेट पाने का हक़ है और उतना पाने वाला उसे बनाना समाज का फ़र्ज है। इसलिए उस(ग़रीब) के और अपने संतोष की खातिर अमीर को पहल करनी चाहिये। अगर वह अपना बहुत ज्यादा अपिग्रह छोड़े, तो कंगाल को अपनी जरुरत का आसानी से मिल जाए और दोनों पक्ष संतोष का सबक सीखें।[63]

प्रस्तुत कथन में गांधी जी अनावश्यक धन संग्रह की आलोचना करते हैं। इस कथन के अनुसार अपिग्रह का दायित्व सिर्फ पूंजीपतियों का नहीं है अपितु गरीब को संतोष और आवश्यकता कम करने की नसीहत दी गई है। गांधी जी के विचार के अनुसार गरीब को पेट भरने की इच्छा होनी चाहिये न कि दुसरे के द्वारा अपिग्रह किये गए संपत्ति से अरबपति बनने की लालच करनी चाहिए। गरीबों को अरबपति बनने के लिए अपने कदमों आत्मबल और मेहनत पर यकीन करना चाहिए।

अनुच्छेद-39: में प्रावधान है कि राज्य प्रयास करेगा कि देश के सामान्यजन तक समान, सुलभ और निःशुल्क न्याय विधिक न्याय प्राप्त हो। इस अनुच्छेद में प्रावधान किया गया है कि, "किसी विशिष्ट अल्पता के कारण व्यक्ति को न्याय से वंचित नहीं किया जाएगा। राज्य प्रयास करेगा कि नागरिक को न्याय तत्परता से प्राप्त हो क्योंकि कहा गया है कि देर से मिला न्याय अन्याय की श्रेणी में आता है।

अनुच्छेद-40; के अंतर्गत राज्य से अपेक्षा की जाती है कि राज्य ग्राम पंचायतों का गठन करेगी। ग्रामों को उनके आतंरिक मामलों में स्वायतता, प्राधिकार उपलब्ध होंगे। राज्य के नीति निदेशक तत्व ग्राम को शासन की इकाई के रूप में स्वीकार करने की हिमाकत करता है। गांधी जी के मूल विचारों में ग्राम पंचायतों की जीवन्तता बहुत ही प्रमुख रही है। गांधी जी चाहते थे कि भारत के सभी ग्राम खुद में स्वायत्त और आत्मनिर्भर हो। वे कहतें हैं कि, "ग्राम स्वराज की मेरी यह कल्पना है कि यह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा, जो अपनी अहम् जरूरतों के लिए अपने पड़ोसियों पर भी निर्भर नहीं करेगा, और फिर भी बहुतेरी दूसरी जरूरतों के लिए- जिसमें दूसरों का सहयोग

[63] गाँधी जी, मंगल-प्रभात, pg. no. 26

अनिवार्य होगा- वह परस्पर सहयोग से काम लेगा। इस तरह हर एक गाँव का पहला काम यह होगा कि वह अपनी जरुरत का तमाम अनाज और कपड़े के लिए कपास खुद पैदा कर लें।[64]

इन वाक्यों में गांधी जी ग्राम की आत्मनिर्भरता, स्वावलंबन आदि के प्रति प्रतिबद्धता को दुहराते हैं। ग्रामों की आत्मनिर्भरता को वास्तविक स्वराज की संज्ञा देते हैं। इन्हीं विशेषताओं से परिपूर्ण मनाकर गांधी जी ने 1945 में जवाहर लाल नेहरू को पत्र लिखा कि, "मेरे आदर्श गाँव में बुद्धिमान व्यक्ति होंगे। वह पशुओं की तरह गन्दगी और अँधेरे में नहीं रहेंगे। पुरुष और महिलाएं स्वतंत्र होंगे और वह दुनिया में किसी के विरुद्ध भी निजीत्व कायम नहीं रखेंगे। प्लेग, हैजा, व चेचक की बीमारियाँ नहीं होंगी, न कोई बेकार होगा, न कोई ऐशो-आराम में लोटेगा। रेलवे, डाक, तार आदि की व्यवस्था की कल्पना की जा सकती है।"[65]

गांधी जी के द्वारा लिखे गए पत्र की स्पष्टता है कि गांधी जी ने ग्राम व ग्रामीण जीवन शैली को पुनर्स्थापित करने की हिमाकत की है। ग्राम्य जीवन की विशिष्टता, आदर्श जीवन शैली, व्यक्तियों के उच्च व्यक्तित्व की भी पैरवी की है। साथ ही ध्यान दिलाया कि वे समस्या जो मूर्त और अमूर्त रूप से मानव व मानवता को खोखला करने वाला है, की ग्राम्य जीवन में कोई स्थान नहीं है।

गांधी जी ग्रामों और शहरों की तुलना करके कहते हैं कि, "इसके सिवाय जीवन के बहुतेरे साधन जो गांवों के खेतों और जंगलों में लगभग मुफ़्त मिल सकते हैं और जिन्हें एकत्र करके लाखों लोगों तक पहुँचाने से गरीबों का सहज गुजारा हो सकता है। उनके बदले शहरों और विदेशों में बना हुआ देखने में थोड़ा बहुत सुविधाजनक है लेकिन अधिकांश दिखावे के लिए ही आवश्यक और अच्छा लगने वाला माल काम में लाने का फैशन बढ़ जाने से देहात के बहुत से उद्योग और मजदूरी के धंधे नष्ट हो गए और होते जा रहे हैं।"[66]

प्रस्तुत कथन में गांधी जी ग्रामों में पाए जाने वाले विशिष्ट संसाधनों जो ग्राम्य जीवन के लिए पर्याप्त है, को बताया है। इन संसाधनों की विशेषता है कि ये संसाधन गरीबों तक पहुँचने में बहुत ही सुलभ है जो ग्राम्य जीवन की सरसता, सहजता और सम्पूर्णता को प्रदर्शित करती है। अप्रत्यक्ष रूप से बाजारवाद की आलोचना सिर्फ

---

[64] गांधी जी, मेरे सपनों का भारत, pg. no. 37

[65] गंगराडे के. डी., गांधी जी के आदर्श और ग्रामीण विकास, pg. no. 11

[66] मशरूवाला घ. किशोरलाल, गाँधी विचार-दोहन, pg. no. 80

दिखावें के लिए है, कहकर करते हैं। बाजारवाद के बढ़ते संक्रमण से आहत होकर चिंता व्यक्त करते हैं कि गांवों की आर्थिक स्वराज खतरे में है।

गांवों की तरफ से होने वाले त्याग पर कृतघ्न होकर गांधी जी कहते हैं कि, "अब तक गाँव वालों ने हजारों की संख्या में अपने जीवन की बलि दी है ताकि हम नगरवासी जीवित रह सकें। अब उनके जीवन के लिए हमकों अपना जीवन देने का समय आ गया है। लेकिन इन दोनों के बीच मौलिक भेद है। ग्रामवासी ने अनजाने और अनचाहे अपने प्राणों की आहुति दी है। उनके पास इस बलिदान से हम नगरवासी प्रतीत हुए है। अब यदि जानबुझ कर उनके लिए बलिदान करें तो इससे हमारा और राष्ट्र का उदात्तीकरण होगा। यदि हम एक स्वाधीन और आत्म-सम्मानी राष्ट्र के रूप में जीवित रहना है तो हमें इस आवश्यक त्याग से पीछे नहीं हटना चाहिए।"[67]

इन कथनों में भावी भारत से आग्रह करते हैं कि गांवों को उनका अधिकार दिया जाए क्योंकि गाँव ने इस देश के लिए बहुत से त्याग किये हैं। गांधी जी बताते हैं कि गाँव ने नगरों को भोजन जैसी मूलभूत आवश्यकता को मुहैया कराया है। इसलिए शहरों का दायित्व होता है कि उन्हें भी वो सब प्राप्त कराये जिसके वे लायक है।

गांधी जी ग्राम्य जीवन के विकास के संबंध में उनका विचार है कि "खादी तथा अन्य ग्रामोद्योग से करोड़ों लोगों को काम मिलता है, यह एक ऐसा सस्ता और सरल व्यवसाय है। जिसे देश के हर समुदाय के व्यक्ति कर सकते हैं तथा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति अपने देश की, गाँव की आम जनता की मेहनत और बुद्धि से बनी वस्तुओं से पूरा कर सकतें हैं। किसानों के पास खेती के अतिरिक्त कोई काम नहीं रहता। एतएव खेती के बाद वे 6 महीनें बेकार रहते हैं। खादी का काम कपास बोने से सूत बनने तथा तैयार करने तक होता है। इससे किसान को अपने परिवार सहित पुरे वर्ष के लिए काम मिलता रहता है। जिससे बेकारी की समस्या का निदान भी हो जाता है और राष्ट्रीय आय में भी वृद्धि होती है।"[68]

ग्राम स्वराज से सम्बंधित विचारों को संविधान में शामिल करके संविधान सभा ने गांधी जी और देश के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को पूरा करने का समर्थ प्रयास किया। राज्य ग्राम्य जीवन पद्धति को जीवित रखने का पूर्ण

---

[67] प्रभु आर.के.- राव .यू.आर, महात्मा गांधी के विचार, pg. no. 347

[68] कुमार हरीश, गांधी: सामाजिक, राजनैतिक परिवर्तन, pg. no. 195

प्रयास करेगा। इसमें कोई संदेह नहीं है कि ग्राम जीवन के उदविकास के प्रति राज्य की जिम्मेवारी का स्त्रोत गांधी जी का चिंतन रहा है।

अनुच्छेद-41: प्रावधान करता है कि राज्य कुछ विशेष दशाओं में काम और शिक्षा की व्यवस्था करेगा। राज्य का दायित्व होगा कि लोगों के अभाव की दशा में लोकहितकारी होने का परिचय देगा। जिसमें काम पाने, शिक्षा पाने, के अतिरिक्त अन्य प्रकार की निःशक्तता की दशा में लोकसहायक बनेगा। इसके संबंध में कहा जाता है कि "नागरिक राज्य को कहाँ मानते है तथा उसके साथ सहयोग इसलिए करते हैं क्योंकि वो उससे, बदले में, अपने सर्वमुखी कल्याण की अपेक्षा करते हैं।

सर्वोदय के चरम आदर्श को सामने रखते हुए, राज्य को नागरिकों के प्रति अपने सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, धार्मिक, राजनैतिक तथा अन्य प्रकार के दायित्वों को, अपनी पूरी सामर्थ्य और इमानदारी से निबाहना चाहिए। विशेष रूप से अपने समय के भारत की साधारण परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए गांधी जी राज्य से अपेक्षा करते थे कि "राज्य निरक्षरता, निर्धनता तथा बेरोजगारी दूर करने का दायित्व निभाएगा तथा सम्प्रदायवाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद तथा अलगाववाद जैसे कुरीतियों से नागरिकों की रक्षा करेगा।

गांधी जी राज्य से यह भी अपेक्षा करतें हैं कि वो अपनी हर नागरिक को अपनी आत्मा और विवेक के अनुकूल अपने जीवन का रास्ता चुनने का अवसर प्रदान करेगा। उन्हें उनके चुने हुए रास्ते पर चलने देगा। उनके रास्ते में जो बाध्यताएं आएगी उन्हें दूर करेगा, तथा ऐसे अवसर पैदा करेगा जिनसे लोग अपने चुने हुए रास्ते पर आसानी से चल सकें और ऐसा करके अपनी तथा अपने समाज की गुणवत्ता को बढ़ा सकें।"[69] गांधी के इन सभी विचारों को संविधान ने अपने अनुच्छेद-41 में विधिवत संकलित करके उनके इस विचार को प्रमाणिकता प्रदान करने का प्रयास किये हैं।

अनुच्छेद-43: का संबंध मजदूरों, किसानों और कर्मगारों से है। इसमें उनके जीवन स्तर, निर्वाह, मजदूरी, अवकास, काम की दशाएं और सामाजिक, सांस्कृतिक अवसर प्रदान करने का कार्य करेगा। इस अनुच्छेद में प्रावधान किया गया है कि समाज में जितने भी निचले तबके के कर्मगार है उनकी सुरक्षा, संरक्षण, महत्व और उन्हें

[69] रामरतन, शोभिका शारदा, गांधी जी की राजनैतिक अवधारणायें, pg. no. 86

गरिमामय जीवन व्यतीत करवाने का दायित्व राज्य को सौंपा गया है। "गांधी जी चाहते थे कि हर व्यक्ति अपनी रोटी, कपड़े, व मकान की आधारभूत आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति अपने शारीरिक श्रम से करें।

इसके संबंध में गांधी जी का विचार है कि "शारीरिक रूप से सुयोग्य हर व्यक्ति अपनी क्षमता के अनुसार अपनी पसंद का शारीरिक श्रम वाला कोई काम करें और उसके बदले में उतना वेतन प्राप्त कर सकें। जिससे वो अपनी आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें। उनका कहना था कि ऐसा करने से लोग आत्मनिर्भर बनेंगे और कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति के श्रम का फायदा उठाकर उसका आर्थिक शोषण नही कर पायेगा।

इसके अतिरिक्त जब शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति शारीरिक श्रम द्वारा की जायेगी तो शरीर भी स्वास्थ्य, चुस्त व रोग मुक्त रहेगा और दवाइयां, डाक्टरों व अस्पतालों की आवश्यकता कम से कम होती जायेगी व उन पर होने वाला खर्च भी कम हो जाएगा।"[70]

अनुच्छेद-46: में प्रावधान किया गया है कि अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों तथा अन्य दुर्बल वर्गों के लिए शिक्षा और अर्थ की सुविधा प्रदान की जायेगी। इस अनुच्छेद में प्रयास किया गया है कि समाज के दुर्बल वर्गों की शोषण से संरक्षा की जायेगी। जिससे उनके समक्ष सामाजिक अन्याय की घटना घटित न हो। राज्य प्रयास करेगा कि उन वर्गों को पर्याप्त सुरक्षा मुहैया कराया जाए जिससे अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों के हित साकारित हो पाए। स्पष्ट है कि अनुसूचित जातियों और जनजातियों की चिंता के निदान का स्त्रोत गांधी जी के विचार है।

गाँधी जी हमेशा ही सर्वोदय की हिमाकत की है जिसमें अंतिम व्यक्ति का उदय करने का प्रावधान किया गया है। अनुसूचित जातियों के साथ होने वाले सामाजिक अन्याय को चिन्हित करते हुए कहते हैं कि, "इस बात से किसी ने इनकार नहीं किया कि अस्पृश्यता एक पुरानी प्रथा है। लेकिन यदि वह एक अनिष्ट वस्तु है, तो उसकी प्राचीनता के आधार पर उसका बचाव नहीं किया जा सकता। यदि अस्पृश्य लोग आर्यों के समाज से बाहर है तो, इसमें उस समाज की हानि है। और यदि कहा जाए कि आर्यों ने अपनी प्रगति यात्रा में किसी मंजिल पर किसी वर्ग-

[70] रामरतन, शोभिका शारदा, गांधी जी की राजनैतिक अवधारणायें, pg. no. 147

विशेष को दंड के तौर पर समाज से बहिष्कृत कर दिया था तो उनके पूर्वजों को किसी भी कारण से दण्डित किया गया हो, परन्तु वह दंड उस वर्ग की संतान को देते रहने का कोई कारण नहीं हो सकता।"[71]

इन वाक्यों में अनुसूचित जातियों ओर होने वाले अन्याय को नाजायज व समाज के लिए अहितकर बताया है। भविष्य में इसे समाप्त करनी की कड़ी हिदायत दी है जिससें आर्यों की पवित्र संस्कृति जीवित रह सकें।

अनुसूचित जनजातियों की सुरक्षा, संरक्षा और महत्व पर चर्चा करते हुए गांधी जी कहते हैं कि, हिंदुस्तान के दुसरे हिस्सों में ऐसे दुसरे कई दुसरे कई सेवक काम कर रहें है, फिर भी अभी उनकी संख्या काफी नहीं है। सच है कि सेवारुपी फसल खूब आई है मगर उनको काटने वाले कम है। और इससे कौन इनकार कर सकता है कि इस तरह की तमाम सेवा महज भुत दया की भावना से प्रेरित सेवा नहीं बल्कि ठोस राष्ट्र सेवा है और वह हमें पूर्ण स्वराज के ध्येय के ज्यादा नजदीक ले जाती है।"[72] प्रस्तुत कथनों में गांधी ने बताया कि इनके बगैर हमारी पूर्ण स्वराज की कल्पना कोरी है। क्योंकि इन्होने ही वास्तविक राष्ट्रसेवा की है और ये ही स्वराज से वंचित है। इसलिए यह कहा जाए कि अनुच्छेद-46 के प्रावधान में शामिल किये गए तत्व गांधी जी के चिंतन से आलोकित है तो गलत न होगा।

राज्य के नीति निदेशक तत्व का **अनुच्छेद-47** प्रावधान करता है कि राज्य खाद्य सामग्री को लेकर एहतियात बरतेगा। राज्य समाज के लोक स्वस्थ्य के लिए कल्याणकारी परिस्थितियों का निर्माण करेगा। इसके लिए राज्य समाज में व्याप्त मादक द्रव्यों, हानिकर औषधियों आदि पर निषेध लगाने का प्रयास करेगा। जिससे लोगों में उत्तम स्वास्थ्य पूर्ण जीवन यापित करने की कामना पूर्ण हो सकें। मादक द्रव्यों व हानिकर औषधियों से होने वाले मानसिक, नैतिक, सामाजिक और शारीरिक पतन को रोका जाए। अनुच्छेद-47 के संबंध में गांधी जी के विचार उल्लेखनीय और अत्यंत प्रासंगिक है। क्योंकि वें इसके संबंध में बहुत ही व्यावहारिक विचार प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि, "अगर हमें अपना ध्येय अहिंसक पुरुषार्थ करना है तो अफ़ीम, शराब बगैरा चीजों के व्यसन में फसें हुए अपने करोड़ों भाई, बहनों के भाग्य को हम भविष्य की मेहरबानी या मरजी पर झूलता नहीं छोड़ सकते"[73]

---

[71] गांधी जी, मेरे सपनों का भारत, pg. no. 144
[72] गाँधी जी, रचनात्मक कार्यक्रम, pg. no. 42
[73] गाँधी जी, रचनात्मक कार्यक्रम, pg. no. 15

प्रस्तुत कथनों में गांधी जी विचार देतें है कि व्यसन समाज, परिवार व व्यक्ति के लिए हानिकारक है। हिंसा विहीन समाज को स्थापित करने के लिए व्यसन जैसे दुर्व्यवहार को छोड़ना बेहद आवश्यक है।

इसी क्रम को आगे बढ़ाते हुए गांधी जी कहते हैं कि, "यदि मुझे एक घंटे के लिए भारत का डिक्टेटर बना दिया जाए तो मेरा पहला काम होगा कि शराब की दुकानों का बिना मुआवजा दिए बंद करवा दिया जाए और कारखानों के मालिकों को अपने मजदूरों के लिए मनुष्योचित परिस्थितियां निर्माण करने तथा उनके हित में ऐसे उपहारगृह और मनोरंजनगृह खोलने के लिए मजबूर किया जाए जहाँ मजदूरों को ताजगी देने वाले पेय और उतने ही निर्दोष मनोरंजन हो सकें।"[74]

स्पष्ट है कि जिस प्रकार से प्रावधान किया गया है उससे जाहिर होता है कि यह **अनुच्छेद-47** गांधी जी के विचार से पल्लवित होता है। गांधी जी सभी प्रकार के व्यसनों पर नियंत्रण की बात करते हैं। उनका मानना है कि शराब जैसे अन्य बुरे व्यसनों से एक व्यक्ति नहीं अपितु उससे जुड़े सगे, संबंधी आदि लोग भी प्रभावित होते हैं। गांधी जी आजीवन दुर्व्यसनों को समाज से दूर रखने का प्रयास किये हैं। संविधान के द्वारा मादक पेयों और हानिकारक औषधियों पर निषेध लगाने का दायित्व लेकर गांधी जी के चिंतन को सफल और सुफल बनाने का प्रयास करता है।

अनुच्छेद 48 व अनुच्छेद 48[क]: के अंतर्गत राज्य प्रयास करेगा कि राज्य कृषि व पशुपालन को बढ़ावा देगा। इसके लिए वह वैज्ञानिक व आधुनिक प्रणालियों को प्रयोग में लाएगा। राज्य दुधारू पशुओं जिसमें खासकर गाय, बछड़ों के नस्लों का परिक्षण व सुधार करेगा। और समाज में हो रहे इनके वध को रोकने के लिए कदम उठाएगा।

अनुच्छेद-48(क): में प्रावधान किया गया है कि राज्य पर्यावरण का संरक्षण, संवर्धन व वन्य जीवों की रक्षा में तत्पर रहेगा। इन सभी चीजों की संरक्षा के माध्यम से राज्य देश की समृद्धि, पर्यावरण व संस्कृति को बचाये रखने का प्रयास करेगा। इन सभी को गांधी जी के चिंतन स्त्रोत का हिस्सा माना जा सकता है। क्योंकि हम जब गाँधी जी के चिंतन को पढ़ते है तो स्पष्ट होता है कि गांधी जी का सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, नैतिक व धार्मिक आदि चिंतन को एक दुसरे पर सामंजस्यिक रूप से अंतरनिर्भर हैं। यदि गांधी जी के चिंतन में कृषि को देखा जाए तो वे

[74] गांधी जी, मेरे सपनों का भारत, pg. no. 140

कहते हैं कि, "स्वाभाविक है कि पंचायत राज के अंतर्गत, भारत एम् सर्वाधिक महत्व किसान का होगा। प्रश्न यह है कि उसे किस प्रकार आगे बढाया जाए?[75]

प्रस्तुत कथन में गांधी जी कृषि व किसानों के हितों और उनकी व्यापकता को बढ़ाने के लिए प्रयत्नशील दिख रहें है।

गांधी जी गाय के महत्व व स्थान को बताते हुए कहते हैं कि, "गाय करुणा का काव्य है। यह सौम्य पशु मूर्तिमान करुणा है। वह करोड़ों भारतीयों की माँ है। गोरक्षा का अर्थ है ईश्वर की समस्त मूक सृष्टि की रक्षा। प्राचीन ऋषि ने, वह जो रहा हो, आरम्भ गाय से किया। सृष्टि के निम्नतम प्राणियों की रक्षा का प्रश्न और भी महत्वपूर्ण है क्योंकि ईश्वर ने उन्हें वाणी नहीं दी है।"[76]

इसके अतिरिक्त हिन्दुओं में गाय की क्या महत्व है को बताते हैं कि, "हिन्दुओं की परख उनकें तिलकों, मन्त्रों के शुद्ध उच्चारण, तीर्थ यात्राओं तथा जात-पात के नियमों के अत्यौपचारिक पालन से नहीं की जायेगी, बल्कि गाय की रक्षा करने की योग्यता के आधार पर की जाएगी।"[77] गोवध को रोकने के संबंध में उनका कथन उल्लेखनीय है कि, "मैं इस बात को दुहराना चाहूँगा.....कि गोवध पर कानूनन पाबंदी गोरक्षा कार्यक्रम का सबसे गौण पहलू है... लोग शायद यह सोचते हैं कि किसी बुराई के विरुद्ध कानून पास होते ही वह बिना किसी अतिरिक्त प्रयास के समाप्त हो जायेगी। सबसे बड़ी आत्म प्रबंचना कोई और नहीं हो सकती। किसी अज्ञानी या छोटे से दुष्टबुद्धि तबके के खिलाफ बनाया गया कानून तो फिर भी कारगर हो सकता है, लेकिन ऐसा कभी कामयाब नहीं हो सकता है जिसका विरोध समझदार और संगठित लोकमत द्वारा किया जा रहा हो या कोई कट्टरपंथी अल्पसंख्यक वर्ग धर्म के आड़ में लेकर कर रहा हो।

मै गोरक्षा के प्रश्न पर जितना ही अधिक विचार करता हूँ यह मेरी धारणा दृढ हो जाती है कि गो और गोवंश की रक्षा तभी संभव है जब हम मेरे द्वारा सुझाए गए उपाय अपनाते हुए एक अवतरित एवं दीर्घकालीन रचनात्मक कार्यक्रम हाथ में लें।"[78]

---

[75] गाँधी जी, हरिजन, 1947 pg. no. 473
[76] प्रभु आर.के.- राव .यू.आर, महात्मा गांधी के विचार, pg. no. 372
[77] गाँधी जी, यंग, 1921, pg. no. 36
[78] गाँधी जी, यंग, 1927, pg. no. 219

प्रस्तुत कथनों में गांधी जी विचार प्रस्तुत करते हैं कि गोरक्षा का एकमात्र माध्यम संविधान नहीं हो सकता। गोरक्षा के लिए हमें दृढ प्रतिज्ञ होने की आवश्यकता है। जिससे गो वंश की रक्षा की जा सकती है। वावजूद इसके इंकार नहीं किया जा सकता है कि इस विषय का प्रावधान गांधी जी के चिंतन से साकारित हो पाया है। इसकें अतिरिक्त इनके विकास का दायित्व राज्य को ही सौंपा गया है।

अनुच्छेद-48(क): यह अनुच्छेद पर्यावरण और वन्य जीवों की रक्षा का प्रावधान करता है। इस अनुच्छेद में राज्य देश के पर्यावरण के संतुलन और वनों में रहने वाले प्राणियों की रक्षा के लिए समुचित कदम उठाएगा। यह अनुच्छेद पूर्णतया गांधी जी के चिंतन से आलोकित होता है। क्योंकि गांधी जी जीवों और वन्य प्राणियों को उतना ही महत्व देते है जितना मनुष्यों को।

इस संबंध में कहाँ जाता है कि, "गांधी जी का जीव दया से अभिप्राय प्राणी मात्र के प्रति दयाभाव से था। वे चाहते थे कि हमें अपनी दया की भावना केवल मनुष्यों तक ही सीमित नहीं रखनी चाहिए, बल्कि हर प्राणी अथवा जीव, जिसमें पशु, पक्षी, तथा पेड़ पौधे भी शामिल है के प्रति समान दयाभाव रखना चाहिए। सामान्य तौर पर, गांधी जी जीव दया की भावना का अर्थ लगाते हैं कि हर संपन्न व्यक्ति को अपने संपर्क में आने वाले अपने से कम संपन्न व्यक्ति की रक्षा करनी चाहिए जिससे संपर्क में आने वाला हर प्राणी लाभान्वित हो।"[79] स्पष्ट है कि गांधी जी के अनुसार अन्य जीवों का महत्व कम नहीं है। हमें उनके प्रति क्रूरता नहीं अपितु दयाभाव के साथ पेश आना चाहिए।

गांधी की का वन्य जीव और पर्यावरण का चिंतन करना ही उन्हें मार्क्स से व्यापक व व्यावहारिक चिन्तक की श्रेणी में ले जाने का प्रयास करता है। क्योंकि वे सिर्फ मनुष्यों पर होने वाले अत्याचार ही नहीं अपितु मनुष्य और प्रकृति से जुड़े सभी जीवों की संरक्षा और और उनके प्रति दयाभाव दिखाने की प्रेरणा देते हैं।

इसलिए स्पष्टतः कहा जा सकता है कि प्रस्तुत अनुच्छेद गांधी जी के चिंतन संग्रह से उठाया गया एक प्रावधान है। जो जीवों व पर्यावरण की चिंता को जायज और आवश्यक ठहराता है।

अनुच्छेद-51: के अंतर्गत अंतर्राष्ट्रीय संबंधों की रुपरेखा सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया है। भारतीय संविधान की एक इकाई राज्य के नीति निदेशक तत्व की एक अनूठी पहल है कि इसके अंतर्गत भारत के

[79] रामरतन, शोभिका शारदा, गांधी जी की राजनैतिक अवधारणायें, pg. no. 141

अंतर्राष्ट्रीय संबंध व राजनीति करने का माध्यम व उद्देश्य सुनिश्चित किये गए हैं। प्रस्तुत अनुच्छेद में उपबंधित किया गया है कि भारत अन्तर्राष्ट्रीय शांति व सुरक्षा को प्रोत्साहन देने का प्रयास करेगा। जिसमें भारत अन्य राष्ट्रों के साथ न्यायसंगत और सम्मानपूर्ण संबंधों को प्रोत्साहित करेगा।

इस अनुच्छेद-51 में उपबंधित किया गया है कि भारत व्यवहार में अंतर्राष्ट्रीय विधि व संधि बाध्यताओं के प्रतिआदर भाव रखेगा। भारत प्रयास करेगा कि अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान मध्यस्थों के माध्यम से हो, समस्याओं में मध्यस्थों की प्रक्रिया को मजबूत करेगा।

राज्य के नीति निदेशक तत्व द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों को उपबंधित करने का स्त्रोत गांधी जी के अंतर्राष्ट्रीय विचार हैं। राष्ट्रीयता और अंतर्राष्ट्रीयता के मध्य संबंधों और दायित्वों की ओर संकेत करते हुए कहते हैं कि, "जिस प्रकार राष्ट्र प्रेम का मार्ग आज हमें सिखाता है कि व्यक्ति को परिवार के लिए प्राणोत्सर्ग कर देना चाहिए। परिवार को गाँव के लिए मिट जाना चाहिए, गाँव को जिले, जिलें को प्रान्त और प्रान्त को देश के लिए बलि दे देनी चाहिए। उसी प्रकार देश के लिए स्वतंत्र होना इसलिए आवश्यक है कि यदि आवश्यकता हो तो विश्व के लिए स्वयं को न्यौछावर कर सकें। अतः राष्ट्रीयता के प्रति मेरा प्रेम अथवा राष्ट्रीयता को मेरी धारणा यह है कि मेरा देश स्वतंत्र हो ताकि आवश्यकता पड़े तो मानव जाति के अस्तित्व की रक्षा के लिए स्वयं को होम कर सकें। इस धारणा में प्रजातीय घृणा का कोई स्थान नहीं है। यह हमारी राष्ट्रीयता की भावना होनी चाहिए।"[80]

इन कथनों में गांधी जी राष्ट्र की सीमाओं की अपेक्षा मानवता और मानव जाति के अस्तित्व को अधिक महत्व देतें है। मानव जीवन के उद्देश्य और त्याग के महत्व को दर्शाकर मानव के हित को सर्वोच्च स्थान दिया है। उन्होंने स्पष्ट किया है कि अन्तर्राष्ट्रीयता किसी भी प्रकार से राष्ट्रवाद में बाधक नहीं है। वे इस बात की ओर इंगित करते हैं कि राष्ट्र को मानव जाति के अस्तित्व के लिए बिखर जाना चाहिए।

अंतर्राष्ट्रीय शांति व संसार में होने वाले युद्धों से दुनिया को बचाने के लिए गांधी का कथन उल्लेखनीय है कि, "अहिंसक व्यक्ति यदि हिंसा पर आधारित तंत्र में रहने के लिए विवश हो और उसके पास हिंसा के आलावा कोई और चारा न हो तो वह अप्रत्यक्ष के बजाय प्रत्यक्ष रूप से उसमें भागीदारी करना पसंद करेगा। मैं जिस दुनिया में रह रहा हूँ वह अंशतः हिंसा पर आधारित है। अगर मुझे अपने पड़ोसियों को मारने के लिए खड़ी की गई सेना के

[80] प्रभु आर.के.- राव .यू.आर, महात्मा गांधी के विचार, pg. no. 420

खर्च में योगदान करने और स्वयं सिपाही के रूप में उसमें भर्ती होने के बीच एक चीज चुननी हो तो मै अपनी आस्था के प्रति निष्ठा रखते हुए इस आशा के साथ भर्ती हो जाऊँगा कि सेना में जाकर कदाचित मै हिंसा की ताकतों को नियंत्रित कर सकूँ और साथी सिपाहियों की मनोवृत्ति में बदलाव ला सकूँ।"[81]

इन कथनों में गांधी जी ह्रदय परिवर्तन की बात करते हैं। गांधी जी सेनाओं से युद्ध को रोकने के लिए हिमाकत करते हैं। इसमें उनका विचार है कि दुनिया को हिंसा का परिणाम और युद्धों से होने वाले क्षतियों को जताकर ही हिंसा व युद्धों को रोका जा सकता है। साथ ही उनका विचार है कि हिंसा करने वाली व्यवस्था में रहकर भी अहिंसक होना और अहिंसा का प्रचार प्रसार किया जा सकता है जिससे विश्व शांति की स्थापना की जा सकें। अहिंसा के माध्यम से विश्व एकीकरण की तरफ ध्यान खींचतें है।

गांधी जी कहते हैं कि, "ईश्वर ने विश्व की व्यवस्था इस तरह की है कि कोई व्यक्ति अपनी भलाई और बुराई को अपने तक सीमित नहीं रख सकता। सम्पूर्ण विश्व मानव शरीर की भांति है जिसके विभिन्न है। एक अंग में पीड़ा होने पर उसकी अनुभूति पुरे शरीर को होती है। एक अंग में सड़न पैदा होने पर अनिवार्यतः सम्पूर्ण शरीर में विष फ़ैल जाता है।"[82]

इन कथनों में गांधी जी विश्व को विश्व के समक्ष सावयवी स्वरुप प्रदान करते हैं। जिसमें सम्पूर्ण विश्व की पारस्परिकता, अंतरनिर्भरता, व्यावहारिकता आदि को एक दुसरे से जोड़कर विश्व शान्ति के लिए प्रयासरत है। दुनिया को शांति का मार्ग चुनने के लिए आग्रह करते हुए गांधी जी कहतें हैं कि,

"मेरा कहना है कि अहिंसा का सिद्धांत राष्ट्रों के बीच भी सच्चा सिद्ध होता है। मैं जानता हूँ कि अगर मैं गत युद्ध की चर्चा करता हूँ तो वह एक नाजुक मामले को छेड़ना होगा। फिर भी स्पष्ट करने के लिए मुझे ऐसा करना ही होगा। जहाँ तक मै समझा हूँ गत युद्ध था जिसे प्रियोक्ति का रूप देकर विश्व वाणिज्य कहा जाता है। आप देखेंगे कि यूरोप में आम निरस्त्रीकरण की शुरुआत- यूरोप को आत्महत्या नहीं करनी तो आगे पीछे होनी चाहिए- से पहले किसी राष्ट्र को बड़े खतरे मोल लेते हुए स्वयं को निरस्त्र करने का साहस दिखाना होगा। अगर किसी राष्ट्र में यह सुखद कदम उठाया तो उस राष्ट्र में अहिंसा का स्तर इतना ऊँचा उठ चूका होगा कि सारी दुनिया उसे आदर की

---

[81] गाँधी जी, यंग, 1930, pg. no. 37

[82] प्रभु आर.के.- राव .यू.आर, महात्मा गांधी के विचार, pg. no. 419

दृष्टि से देखेंगी। उस राष्ट्र के निर्णय त्रुटिहीन होंगे, वह दृढनिश्चयी होगा, उसमें आत्मत्याग की भरी क्षमता होगी और वह जीतनी अपनी भलाई चाहेगा उतनी ही दुसरे राष्ट्रों की भी चाहेगा।"[83]

गाँधी जी अंतर्राष्ट्रीय मामलों में निरस्त्रीकरण के माध्यम से विश्व में प्रेम का संचार करते हैं। प्रेम का संचार करते हुए कहते हैं कि, "हो सकता है कि अंतर्राष्ट्रीय मामलों में प्रेम के नियम को मान्यता मिलने में अभी काफी समय लगें। सरकारी तंत्र विभिन्न राष्ट्रों के नागरिकों के बीच रुकावट बन जाते हैं और उनके ह्रदय को मिलने नहीं देते। फिर भी हम देख सकते हैं कि दुनिया किस तरह इस तथ्य को अधिकाधिक समझती जा रही है कि जिस प्रकार से व्यक्तियों की पारस्परिक समस्याएँ ताकत के जोर पर नहीं सुलझायी जा सकती है, उसी प्रकार राष्ट्रों के आपसी झगड़ों को भी ताकत का सहारा लेकर सुलझाना संभव नहीं है। बल्कि थल सेना, नौसेना की अपेक्षा सहयोग की आर्थिक शक्ति कहीं ज्यादा शक्तिशाली और निर्णायक है।"[84]

इन कथनों में प्रेम की ताकत को अधिक प्रभावकारी मानकर गांधी जी अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में प्रेम को लेकर बेहद उत्सुक और आशान्वित है। गांधी जी यूनेस्कों संगठन की प्रेम और शांति के लिए किये जा रहे प्रयासों की सराहित करते हुए कहते हैं कि, "मुझे शैक्षणिक और सांस्कृतिक गतिविधियों के जरिये शांति स्थापना के यूनेस्कों के प्रयासों में गहरी दिलचस्पी है। मैं इस बात को अच्छी तरह समझता हूँ कि दुनिया के राष्ट्रों के बीच आज जो घोर शैक्षणिक तथा सांस्कृतिक असमानता है, वे जब तक दूर नहीं होगी तब तक सच्ची सुरक्षा और स्थायी शांति सुनिश्चित नहीं की जा सकती। उन कम भाग्यशाली देशों के दूरस्थ घरों में भी प्रकाश पहुँचाना जो अपेक्षाकृत अन्धकार में है और मै समझता हूँ कि इस दिशा में खास कदम उठाने की खास जिम्मेदारी उन राष्ट्रों की है जो आर्थिक और शैक्षणिक दृष्टि से उन्नत है।"[85]

इन कथनों में गांधी जी संसार उस संगठन की तारीफ़ करते है जिसने विश्व में हासिये पर रहने वाले देशों को उन्नत बनाने का जिम्मा लिया हुआ है। गांधी जी यूनेस्कों के शैक्षणिक और सांस्कृतिक गतिविधियों की तारीफ़ में कहते हैं कि यह संगठन विश्व में अहिंसा और शांति का माध्यम हो सकता है। क्योंकि यह संगठन विश्व के

---

[83] गाँधी जी, यंग, 1925, pg. no. 345

[84] प्रभु आर.के., राव .यू.आर, महात्मा गांधी के विचार, pg. no. 440

[85] वही, pg. no. 420

शैक्षणिक और सांस्कृतिक खाई को पाटने में लगा है, तात्पर्य है कि यह संगठन पिछड़े देशों के लिए काम कर रहा है जो अत्यंत सराहनीय है।

इन तमाम बातों को नीति निदेशक तत्व में शामिल करने के उद्देश्य स्पष्ट है कि संविधान निर्माता गांधी के चिंतन से कुछ प्राप्त करना चाहते थे। इसीलिए भारतीय संविधान के नीति निदेशक में अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों का जिक्र करके गांधी जी के चिंतन को प्रासंगिक और पुनर्जीवित किया गया है। अंतर्राष्ट्रीय संबंध के उद्देश्य और माध्यम को नीति निदेशक तत्व में शामिल किया गया है कि राज्य के पास लचीला विकल्प मौजूद हो। गांधी जी के सभी विचारों के मूल को राज्य के नीति निदेशक तत्व में सम्मिलित किया गया है। अंतर्राष्ट्रीय मामलों में शांति की पहल करना भारतीय संविधान के नीति निदेशक तत्व की अनूठी विशेषता है। संविधान में शामिल करने से गांधी जी के विचार को सार्वभौमिकता देने का सकारात्मक प्रयास किया गया है।

अंततः राज्य के नीति निदेशक तत्वों के विविध पक्षों को अवलोकित करने एक बाद स्पष्ट होता है कि नीति निदेशक तत्व में गांधी जी के चिंतन को व्यावहारिकता प्रदान करने के लिए संविधान में शामिल किया गया है। नीति निदेशक तत्व में राज्य को अपनी कार्यविधि संपन्न करने के लिए स्वेच्छा का विकल्प मौजूद रहता है। अर्थात् राज्य इन नीतियों को पालन करने के लिए न तो बाध्य है और न ही न्यायलय के समक्ष जवाबदेह है।

नीति निदेशक तत्व राज्य को रास्ता दिखलाता है कि ये लिखित रास्ते देश के हित में है। इन लिखित रास्ते के माध्यम से राज्य और नागरिक अपने हितों में सामंजस्य स्थापित कर सकते हैं। नीति निदेशक तत्व को संविधान में शामिल करने के अन्य महत्वपूर्ण उद्देशों में गांधी जी के चिंतन को संविधान में उचित स्थान देना था। जिससे देश को स्वराज की वास्तविकता दर्शन प्राप्त हो।

गांधी जी के चिंतन को व्यावहारिक बनाने का माध्यम नीति निदेशक तत्व बन रहा है। गांधी जी के दृष्टि में देखा जा सकता है कि नीति निदेशक तत्व सामाजिक क्रांति का माध्यम बन सकता है। जिस तरीके के विषय इसके विषय प्रावधानित है उससे स्पष्ट है कि भारतीय समाज अंग्रेजीयत की चंगुल से मुक्त होगा और भारतीय स्वराज प्राप्त करेंगे। गांधी जी की दृष्टिकोण से इन प्रावधानों से उन परिस्थितियों का निर्माण होगा जो व्यक्ति के सर्वोत्तम विकास को साकारित कर सकेगा। गांधी जी दृष्टि से राज्य का स्वरुप और व्यवहार कैसा हो? को नीति निदेशक तत्व में शामिल किया गया है।

अंततः कहा जा सकता है कि नीति निदेशक तत्व को गांधी जी का मार्ग निर्देशन प्राप्त होता है। गांधी समर्थित सामाजिक और आर्थिक न्याय पर निर्मित व्यवस्था, सामाजिक सुरक्षा, सामाजिक कल्याण, समाजवाद और लोककल्याणकारी व्यवस्था को स्थायित्व देने का प्रयास करते हैं।

सारतः कहा जा सकता है कि नीति निदेशक तत्व संविधान की आत्मा है और नीति निदेशक तत्व की आत्मा गांधी जी के विचार है। इन विचारों से विमुख होने की गलती कोई सरकार और सत्ता नहीं करेगी।

अध्याय-4

नागरिक कर्तव्य और गांधी जी के विचार

अपने अधिकारों को पूरा करने का अधिकार ही एकमात्र अधिकार है, जिसके लिए मनुष्य जीवन धारण करता और उसका भरण पोषण होता है। इसी के अंतर्गत मनुष्य के सभी न्यायिक अधिकार निहित होते है। भारतीय संविधान नागरिक अधिकार से साथ-साथ नागरिक कर्तव्य को संकलित करता है। हालांकि भारतीय संविधान में नागरिक कर्तव्य को उस समय शामिल नहीं किया गया था जब संविधान बनकर तैयार हुआ। संविधान के अंगीकृत, स्वीकृत होने के बहुत वर्षों के बाद कर्तव्य को शामिल किया गया।

संविधान के 42वें संशोधन अधिनियम 1976 द्वारा संविधान के भाग 4 के पश्चात् एक नया भाग 4(क) जोड़ा गया। जिसके द्वारा पहली बार संविधान में नागरिकों के मूल कर्तव्यों को समाविष्ट किया गया।[86] मूल कर्तव्य का संविधान का हिस्सा बनने देरी की वजह है "भारतीय संविधान के निर्माताओं का यह विचार था कि मौलिक अधिकारों के साथ मौलिक कर्तव्यों का दायित्व स्वतः जुड़ा होता है। अतः मूल संविधान में मौलिक कर्तव्यों का उल्लेख नहीं किया गया था। विश्व के विविध देशों में जैसे- जापान, चीन, इटली, पूर्व सोवियत संघ के संविधानों में मौलिक कर्तव्यों का उल्लेख किया गया है।[87]

मूल कर्तव्यों की संख्या दस है। ये अनुच्छेद 51(क) में अंतर्बिष्ट है। भाग 4(क) जो 42वें संविधान संसोधन अधिनियम, 1976 द्वारा अन्तःस्थापित किया गया है। इस अनुच्छेद के अधीन भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि-

1. संविधान का पालन करें और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान का आदर करें।
2. स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में संजोए रखें और उनका पालन करें।
3. भारत की प्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करें और उसे अक्षुण्ण रखें।
4. देश की रक्षा करें।

---

[86] पाण्डेय जयनारायण. भारत का संविधान, pg. no.404

[87] मंगलानी, डा. रूपा,. भारतीय शासन एवं राजनीति pg. no.161

5. भारत के सभी लोगों में समानता, समरसता और सामान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करें।
6. हमारी सामासिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्व समझें और उसका परिरक्षण करें।
7. प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा और उसका संवर्धन करें।
8. वैज्ञानिक दृष्टिकोण और ज्ञान अर्जन की भावना का विकास करें।
9. सार्वजनिक संपत्ति की रक्षा करें।
10. व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत प्रयास करें।
11. छः वर्ष की आयु से चौदह वर्ष की आयु तक के बच्चों या प्रतिपाल्यों के माता-पिता या संरक्षक जैसा मामला हो, उन्हें शिक्षा का अवसर प्रदान करें। [88]

कर्तव्य छः में संकलित 'समासिक संस्कृति' शब्द की व्याख्या उच्चतम न्यायलय करता है- "यद्यपि इस देश के लोगों में अनेक विभिन्नताएं है। वें इस बात पर गर्व करतें हैं कि वे एक सामान्य विरासत के सहभागी है और वह विरासत और नहीं संस्कृति की विरासत है।"[89]

बावजूद इसके जब भारतीय संविधान के स्त्रोतों की चर्चा की जाती है तब बताया जाता है कि भारतीय संविधान में शामिल नागरिक के मूल कर्तव्य का स्त्रोत रूस का संविधान है।

भारतीय संविधान में वर्णित मूल कर्तव्य को लागू करने के सन्दर्भ में बहुत है भिन्न व्यवस्था है। "संविधान में इन कर्तव्यों के सीधे प्रवर्तन के लिए या उनके उल्लंधन के निवारण के लिए किसी अधिशास्ति का कोई उपबंध नहीं है। इसलिए उनके कार्यान्वन के लिए विधान आवश्यक है। उदाहराणार्थ किसी व्यक्ति के विरुद्ध जो इस अनुच्छेद के अधीन अपने कर्तव्य का पालन नहीं करता है, परमादेश रिट जारी नहीं की जा सकती। इस अनुच्छेद के खंड (क) के अधीन कर्तव्य के विषय में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि, राष्ट्रगान को खड़ा होकर उचित आदर उपदर्शित किया जाता है, जब राष्ट्रगान गाया जाता है। यह सही कहना सही नहीं होगा कि गाने में सम्मिलित न होने से अनादर उपदर्शित किया जाता है।"[90]

---

[88] बसु डी.डी., भारत का संविधान, pg. no.142
[89] वही
[90] गढ़वाल दीपशिखा, वैश्वीकरण, मानवाधिकार, और गांधी, pg. no. 89

महात्मा गांधी जी ने प्रायः कर्तव्य को महत्व प्रदान किया है। वें व्यक्ति के कर्तव्यों को बताते है जो प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष तौर पर उन नागरिकों से सम्बंधित है जो राष्ट्र के नागरिकों को कर्तव्य बोध कराता है। कर्तव्य पालन हेतु व्यक्ति की स्थिति और साधन को निर्धारित करने का प्रयास करते हुए कहतें हैं, "समाज में जीने के लिए व्यक्तिगत स्वाधीनता और परस्पर निर्भरता दोनों आवश्यक है। पूरी तरह आत्मनिर्भर तो कोई राविंसन क्रूसों ही हो सकता है। अपनी बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए यथासंभव प्रयास कर लेने के बाद मनुष्य शेष आवश्यकताओं के लिए अपने पड़ोसियों से सहयोग मांगेगा। यही सच्ची सहकारिता होगी।"[91]

प्रस्तुत कथन में महात्मा गांधी जी बताने का प्रयास करते हैं कि व्यक्ति पूर्णतया विपत्सित जीवन यापित नहीं कर सकता है। व्यक्ति को गुणवत्ता युक्त जीवन जीने के लिए उसे अन्यों के साथ संबंध बनाने होंगे जिससे उसकी हर प्रकार की आवश्यकता की पूर्ति होगी। यह पारस्परिकता अंतरनिर्भरता स्वास्थ्यवर्धक होना चाहिए जिससे लोगों की समान महत्ता स्थापित हो पाए। एकरूपता को स्थापित करने का प्रयास प्रत्येक नागरिक के द्वारा किया जाना चाहिए। इस कथन के अनुसार स्पष्ट है कि समाज में गतिशीलता, कार्यशीलता, प्रकार्यशिलता किसी एक व्यक्ति की जिम्मेवारी नहीं हो सकती है। इसलिए समाज में स्वाधीनता और पारस्परिकता के माध्यम से सहकारिता स्थापित करनी चाहिए।

संविधान में समाहित किये गए कर्तव्यों की श्रृंखला में प्रथम कर्तव्य को गाँधी जी के चिंतन में आलोकित किया गया है। संवैधानिक दृष्टि से प्रत्क्षतः तो नहीं पर अपनी दृष्टि से नागरिक कर्तव्य की व्यापकता को इंगित कर चुकें है। वें संस्थाओं और राष्ट्र से संबंधित पहचानों के सम्मान के सन्दर्भ में कहतें है कि, "भारत मेरे लिए दुनिया का सबसे प्यारा देश है इसलिए की नहीं कि यह मेरा देश है, लेकिन इसलिए कि मैंने इसमें उत्कृष्ट अच्छाई का दर्शन किया है। भारत की हर एक चीज आकर्षित करती है। सर्वोच्च आकांक्षाएं रखने वाले किसी व्यक्ति को अपने विकास के लिए जो कुछ चाहिए, वह सब भारत में मिल सकता है। भारत मूल स्वरुप में कर्मभूमि है, भोगभूमि नहीं। भारत दुनिया के उन गिने-चुने देशों में से है। जिन्होंने अधिकांश पुरानी संस्थाओं को यद्यपि उन पर अंधविश्वास और मूल भ्रांतियों की काई चढ़ गई है को कायम रखा है। साथ ही अभी तक अंधविश्वास और मुलाभ्रन्तियों की इस काई को दूर करने की और इस तरह अपना शुद्ध रूप प्रकट करने की, अपनी सहज क्षमता भी रखता है। में

[91] प्रभु आर.के.- राव .यू.आर, महात्मा गांधी के विचार, pg. no. 424

भारत की भक्ति करता हूँ, क्योंकि मेरे पास जो कुछ भी है वह सब उसी का दिया हुआ है। मेरा पूरा विश्वास है कि उसके पास सारी दुनिया के लिए सन्देश है। उसे यूरोप का अन्धुनुकरण नहीं करना है।"[92]

प्रस्तुत कथनों में गांधी जी भारत की विशेषता और उसकी उत्कृष्टता का दर्शन कराते हैं। साथ ही भारत में निवास करने वालों की गौरवशाली परंपरा है कि वे अपने मूल परंपरा और राष्ट्र के प्रति उनके अनुराग का संरक्षण जिसे भारतीय शिद्दत से करते है, की व्याख्या किये है। उन्होंने इसको प्रत्यक्षतः तो नहीं पर अप्रत्यक्ष रूप से दर्शाने का प्रयास किये हैं कि यही भारत और भारतीयों की परंपरा रही है और अपनी परंपरा पर कायम रहना सभी भारतीयों का परम कर्तव्य है। इसी परंपरा के माध्यम से गांधी जी भारत को दुनिया में विशेष बनाते है। इसी परंपरा को सुन्दर, स्पष्ट, और प्रत्यक्ष रूप से संविधान में संरक्षित कर्तव्य में शामिल किया गया है।

इसी कर्तव्य की व्याख्या करते हुए कहतें हैं कि, "मेरा देश-प्रेम मेरे धर्म द्वारा नियंत्रित है। मै भारत से उसी तरह बंधा हूँ जिस तरह कोई बालक अपनी माँ की छाती से चिपटा रहता है। क्योंकि मै महसूस करता रहता हूँ कि वह मुझे मेरा आध्यात्मिक पोषण देता है। उसके वातावरण से मुझे अपनी उच्चतम आकांक्षाओं की पुकार का उत्तर मिलता है। यदि किसी कारण मेरा यह विश्वास हिल जाए या चला जाए तो मेरी दशा उस अनाथ जैसी होगी, जिसे अपना पालक पाने की आशा ही न रही हो।"[93]

प्रस्तुत कथन में गांधी जी भारत को अपनी माँ का उपमा देते है और इसके इतर खुद को निःसहाय पाते हैं। जो उनका उनके राष्ट्र के प्रति कर्तव्यबोध को अंकित करता है। यही कर्तव्य बोध देश के समस्त नागरिकों में होना चाहिए को उद्देश्य बनाकर संविधान मुल कर्तव्य के साथ समागम स्थापित करता है।

भारतीय संविधान नागरिकों से अपेक्षा करता है कि स्वतंत्रता संग्राम में शामिल होने वाले समस्त महापुरुषों का सम्मान व आदर भाव रखेंगे। संविधान की यह अपेक्षा मूल कर्तव्य की श्रृंखला में दुसरे कर्तव्य के माध्यम से रखता है।

भारतीय संविधान नागरिकों से यह अपेक्षा करता है कि उसके नागरिक राष्ट्र की सर्वप्रमुख हित उसकी राष्ट्रीय एकता और अखंडता होती है। "किसी देश की मार्मिक हित इतना बुनियादी समझा जाता है कि अक्सर इसे

---

[92] गाँधी जी, मेरे सपनों का भारत. pg. no.11

[93] गाँधी जी, मेरे सपनों का भारत. pg. no.22

अस्थायी और दीर्घकालीन समझा जाता है। राष्ट्रीय हित के अन्य सब पहलू गौण समझे जाते है। इसमें राष्ट्रीय सुरक्षा, स्वाधीनता और अखंडता की रक्षा आदि प्रमुख है। राज्य के मुलभुत उद्देश्य बाहरी शत्रुओं से सुरक्षा प्रदान करना तथा आंतरिक क्षेत्र में सुव्यवस्था स्थापित रखना माने गए है।"[94]

भारतीय संविधान इस राष्ट्रीय हित का दायित्व देश के नागरिकों को उनके कर्तव्य के माध्यम से सौंपता है। वह प्रत्येक नागरिक को यह दायित्व देता है कि देश की एकता, अखंडता, संप्रभुता उन्हीं के हाथ में है। राष्ट्रीय एकता अखंडता को बनाये रखने के लिए गांधी जी विचार प्रस्तुत करतें हैं कि, "यह भविष्य बतलायेगा कि क्या हम अपनी जन्मभूमि का और उस छोटी सी पृथ्वी का, जिसकी बदौलत हम जीवित है, कोई भला कर रहें है अथवा उसके ऊपर भार है।" इस कथन के माध्यम से गांधी जी सामान्य नागरिकों के मष्तिष्क में अपने राष्ट्र के प्रति श्रद्धा जगाने का कार्य करते हैं।

कर्तव्यों की श्रृंखला में चौथा कर्तव्य है कि सभी नागरिक देश की रक्षा करें। इसका तात्पर्य है कि राष्ट्र की रक्षा की जिम्मेवारी सिर्फ किसी पद, संस्था, आदि तक सीमित नहीं है। राष्ट्र की रक्षा का दायित्व सभी नागरिकों के लिए है चाहे वह किसी पद पर हो या न हो।

कर्तव्यों के इसी क्रम में 5वें स्थान पर वें कर्तव्य आते है जिसके द्वारा राष्ट्र में समरसता, भातृत्व, समता का निर्माण होता है। इसका दायित्व सिर्फ एक नागरिक पर न होकर सभी नागरिकों को है। सभी नागरिक ऐसी परिस्थिति का निर्माण करें जिसके द्वारा समाज कल्याण हो सकें। इन सभी को अगर गांधी चिंतन के दृष्टिकोण में संदर्भित किया जाए तो इसकी व्यापकता स्वतः झलकने लगती है। गांधी जी की दृष्टि में नागरिक के कर्तव्य को संकलित किये गए हैं। गांधी जी विभिन्न अवसरों पर नागरिकों के राज्य के प्रति, राज्य के नागरिकों के प्रति तथा नागरिकों के परस्पर राजनैतिक दायित्वों का उल्लेख किया गया है। इसमें नागरिकों के दायित्वावाही के रूप में दायित्वग्राही राज्य के प्रति प्रमुख दायित्व निम्नलिखित है-

1. उन सब कानूनों का स्वेच्छा से पालन करना जो नागरिकों ने या तो स्वयं बनाये हो या फिर उनके द्वारा निर्वाचित तथा अधिकृत प्रतिनिधियों ने बनाये हो तथा जो उनके सामान्य हित में हो।

[94] फड़िया. बी.एल., अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति- सिद्धांत एवं समकालीन राजनीतिक मुद्दे, pg. no.136

2. ऐसी किसी भी कानून या आदेश को न मानने का कर्तव्य जिसकों स्वीकार करने के लिए उसकी अपनी आत्मा गवाही न दें।
3. शान्ति तथा व्यवस्था बनाये रखना।
4. अपनी सामर्थ्य के अनुसार, सरकार द्वारा लगाये गए करों का भुगतान करना।
5. युद्ध, बाहरी आक्रमण, विद्रोह, भुखमरी, बाढ़, और सूखे जैसी असाधारण परिस्थितियों में राज्य के साथ सहयोग करना।
6. राज्य के साथ उन सब कार्यक्रमों में सहयोग करना जो जनहित में हो; तथा
7. अपने उन सभी आधारभूत अधिकारों, स्वतंत्रताओं तथा स्वतंत्रताओं के लिए संघर्ष करना जो जीवन निर्वाह के लिए अनिवार्य है तथा जिनको प्राप्त करने के लिए उससे सम्बंधित दायित्व पहले ही पुरे कर लिये गए हो।[95]

गांधी जी चिंतन को गहराई से देखने के बाद स्पष्ट होता है कि गांधी जी सिर्फ नागरिक के राज्य के प्रति ही नहीं अपितु नगरिक के नागरिक के प्रति क्या होना चाहिए का निर्धारण करने का प्रयास गांधी जी करते हैं। उनके साहित्य और चिंतन के अध्ययन करने के पश्चात् स्पष्ट होता है कि उन्होंने ने नागरिक के नागरिक के प्रति अनेक सामाजिक, शैक्षणिक, आर्थिक, नैतिक, राजनैतिक और धार्मिक दायित्व का निर्वाह करने की हिमाकत की है।

नागरिकों के नागरिकों के प्रति सामाजिक दायित्व के अंतर्गत गांधी जी सम्प्रदायवाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद, अलगाववाद जैसी कुप्रवृत्ति से दूर रहने की हिदायत और दायित्व देतें हैं। सम्प्रदायवाद के सन्दर्भ में चिंता व्यक्त कर कहतें हैं कि, "मैं हिन्दुओं को जितना प्रेम करता हूँ, उतना मुसलमानों को भी करता हूँ। मेरे ह्रदय में जो भाव हिन्दुओं के लिए उठते हैं वही भाव मुसलमानों के लिए भी उठते हैं। यदि मैं अपना ह्रदय चिर के दिखा सकता तो आप पाते कि उसमें कोई अलग-अलग खाने नहीं हैं, एक हिन्दुओं के लिए, दूसरा मुसलमानों के लिए, तीसरा किसी और के लिए आदि आदि।[96]

[95] रामरतन, शोभिका शारदा, गांधी जी की राजनैतिक अवधारणायें, pg. no.85
[96] प्रभु आर.के.- राव .यू.आर, महात्मा गांधी के विचार, pg. no.382

ये कथन तो उन्होंने खुद के लिए दिया था और संप्रदाय के संबंध में वें क्या सोचतें है को बताया है। उन्होंने इस सन्दर्भ में नागरिकों से अपेक्षा की है कि, "प्रत्येक व्यक्ति को एक दुसरे के धर्म का आदर करना चाहिए और उसके अपकार की बात मन में भी नहीं लानी चाहिए।"[97]

गांधी जी जातिवाद को भारतीय समाज की एक कुंठा के रूप में देखते है। इस कुंठा को समाप्त करने के लिए वे आजीवन प्रयासरत रहें। जातिवाद की तौहीनी करने के परिप्रेक्ष्य वें कहतें हैं कि, "सनातनियों के पास उन्हें लड़ाई का जोश लेकर नहीं बल्कि अपनी अहिंसा को शोभा देने वाली मित्रता की भावना से पहुंचना चाहिए। और खुद हरिजनों के मामलों में तो हर एक हिन्दू को समझना चाहिए कि हरिजनों का काम उनका काम है। और उसमें उनकी मदद करनी चाहिए और जिस अकुलाने वाली व भयानक अलहदगी में उन्हें रहना पड़ता है, उसमें उनके साथ शामिल होना चाहिए।"[98]

इस कथन के माध्यम से गांधी जी भारतीय समाज में सामाजिक रूप से समानता और सहभावी सामंजस्य की परिस्थिति को उत्पन्न करना चाहते थे। उनके इसी विचार को संविधान ने ग्रहण करके उनके विचार साधन को प्रासंगिक बनाने के साथ देश की एक संकीर्ण और व्यापक समस्या को सुलझाने का प्रयास किया है।

गांधी जी क्षेत्रवाद और अलगाववाद जैसे कुप्रवृत्ति पर कुठाराघात करते हैं। भारत की विशालता और व्यापकता को चिन्हित करते हुए कहते हैं कि, "भारत चन्द शहरों में नहीं बल्कि अपने सात लाख गाँव में बसा हुआ है।"[99] इस प्रकार स्पष्ट है कि गांधी जी के दृष्टि में देश के कुछ टुकड़े ही नहीं है ना ही इनके हित प्राथमिक है। गांधी जी के चिंतन में क्षेत्रवाद और अलगाववाद जैसी तुच्छ स्वार्थों का कोई स्थान नहीं है। गांधी जी के इन्हीं विचारों से प्रकाशित होकर संविधान नागरिकों के मूल कर्तव्यों में प्रत्यक्षतः या अप्रत्यक्षतः रूप से संगृहीत किया है।

संविधान नागरिकों से अपेक्षा करता है कि नागरिक उन्हीं कार्यों को कार्यान्वित करें जिससे राष्ट्र की एकता, समृद्धता, अखंडता में विस्तार हो। न कि राष्ट्र के समक्ष इन चीजों की समस्या उत्पन्न हो।

---

[97] यंग इण्डिया, 29-05-1924, pg. no. 180

[98] गांधी जी, रचनात्मक कार्यक्रम pg. no.14

[99] गाँधी जी, मेरे सपनों का भारत, pg. no.12

इसके अतिरिक्त गांधी जी नागरिकों के लिए आर्थिक दायित्व सौपतें हैं। वे शारीरिक श्रम के माध्यम से समाज में आर्थिक विकास को समर्थित करते हैं। अपेक्षा करतें हैं कि सभी व्यक्ति अपनी सहभागिता देगा। इसी के परिप्रेक्ष्य उनका कहना है कि, "महान प्रकृति चाहती है कि मनुष्य अपनी रोटी के लिए पसीना बहाए। इसलिए जो व्यक्ति एक मिनट बर्बाद करता है वह अपने पड़ोसियों पर भार है। और ऐसा करना अहिंसा के प्रथम पाठ का उल्लंघन है। अहिंसा अगर अपने पड़ोसियों का सुसंतुलित और पूरा-पूरा ध्यान रखना नहीं है तो क्या है? निष्क्रिय व्यक्ति में इसी बुनियादी बात की कमी होती है।"[100] भारतीय संविधान ने नागरिकों को आर्थिक दायित्व अपने कर्तव्यों की श्रृंखला के दसवें कर्तव्य में सौंपता है।

नागरिकों के नागरिक के प्रति अन्य दायित्वों में शैक्षणिक दायित्व को शामिल किया गया है। इस दायित्व में प्रत्येक व्यक्ति को संरक्षित बच्चों को साक्षरित करने का दायित्व दिया गया है। संविधान नागरिकों से अपेक्षा करता है कि, छः वर्ष की आयु से चौदह वर्ष की आयु तक के बच्चों या प्रतिपाल्यों के माता-पिता या संरक्षक जैसा मामला हो, उन्हें शिक्षा का अवसर प्रदान करें।

संविधान में वर्णित यह मूल कर्तव्य पूर्णतया गांधी चिंतन से आलोकित है। उनका चिंतन है कि, "सात वर्ष तक के सभी बच्चों को स्कूल भेजें जिससे वह वहां पर अनिवार्य, निःशुल्क, तथा व्यावसायिक प्राथमिक शिक्षा प्राप्त कर सकें। तथा चौदह वर्ष की आयु प्राप्त करने पर जब वो निकलें तो कोई काम, धंधा, या नौकरी कर अपनी आजीविका कमा सकें। साथ ही साथ महिलाओं तथा हरिजनों की शिक्षा के लिए विशेष कदम उठाए जाए, क्योंकि समाज में ये वर्ग शिक्षा की दृष्टि से लगभग पूरी तरह से पिछड़े हुए है।"[101]

अंत में गांधी जी के चिंतनावलोक में नैतिक और धार्मिक दायित्व का विस्तार किया गया है। ये वे दायित्व है जो न सिर्फ व्यक्तिगत अपितु दूसरे व्यक्तियों के प्रति सकारात्मक कदम हो सकता है। इन दायित्व में गांधी जी के मूल विचार सम्मिलित होते है। ये वे कर्तव्य है जो व्यक्ति को व्यक्ति के अन्दर ही निखार लाने में सहायक है। जैसे हर नागरिक को चाहिए कि वो अपनी आत्मा का अनुशरण करें। असत्य और अन्याय का रास्ता छोड़कर सत्य और न्याय के रास्ते पर चलें।"[102] हिंसा का त्याग करके अहिंसा और शांति के रास्तें को चुने जिससे स्वराज प्राप्त

---

[100] प्रभु आर.के.- राव .यू.आर, महात्मा गांधी के विचार, pg. no.188

[101] रामरतन, शोभिका शारदा, गांधी जी की राजनैतिक अवधारणायें, pg. no.85

[102]रामरतन, शोभिका शारदा, गांधी जी की राजनैतिक अवधारणायें, pg. no.85

हो। ईश्वर में अपनी आस्था बनाये रखें। इसके अतिरिक्त वे कहतें हैं कि, "अपनी संस्कृति, सभ्यता, नैतिक मूल्यों तथा उन सभी सामाजिक संस्थाओं तथा व्यवस्थाओं को स्वीकार करें, जो उसे प्रसांगिक लगती हो।[103] स्वदेश में निर्मित वस्तुओं पर विश्वास, प्रयोग और उसका सम्मान करें। अपने धारण योग्य धर्म को सहर्ष स्वीकार करके उसका पालन करें। धर्म और अन्य धर्मों के अनुयायियों को सम्मान और आदर भाव रखें।

ये सभी नागरिक के नागरिक दायित्व गांधी जी की प्रेरणा से भारतीय संविधान दूसरे और व्यापक शब्दों में नागरिकों को सौंपता है। वस्तुतः सौपें गए कर्तव्यों का आधार को गांधी जी के चिंतन को माना जाए तो अतिशयोक्ति न होगी। क्योंकि उन सभी को कर्तव्य माना गया है जिस पर गांधी जी के चिंतन गहरी पैठ थी।

महात्मा के चिंतन में अधिकार और कर्तव्य

ज्ञात मानव इतिहास में 20वीं शताब्दी ऐसी शताब्दी थी जिसमें मानवाधिकार और अधिकार के मांग की गूंज थी। 20वीं शताब्दी के दौर में विश्व में समस्त देशों द्वारा और देशों में नागरिक द्वारा अधिकार मांगे गए। यदि 20वीं शताब्दी को अधिकारों की शताब्दी कहा जाए तो गलत न होगा। साथ ही यह उल्लेखनीय है कि इसी शताब्दी में दो बड़े नरसंहारक विश्व युद्ध हुए है। इसी शताब्दी में एक छोर पर गांधी जी कार्य कर रहें होते हैं जो सबसे अलग है। गांधी जी अधिकार की अपेक्षा कर्तव्य पर अधिक ध्यान देने की बात कही।

महात्मा गांधी और नागरिक कर्तव्य के संबंध में कहा जाता है कि,"वें कर्तव्य को प्रथम और अधिकार को द्वितीय महत्व देतें है। उनका कहना था कि जो व्यक्ति अपने कर्तव्यों को इमानदारी से पूरा करता है उसे अधिकार भी स्वयं मिला जाते है। गांधी जी कर्तव्य पर अधिक बल देते थे। उनका विश्वास था की सेवा से मेवा की प्राप्ति होती है।"[104] गांधी जी कर्तव्य को सिर्फ संवैधानिक कर्तव्य पालन का समर्थन नहीं अपितु कर्तव्य पालन को जीवन की व्यावहारिकता में लाने का प्रयास किया। उन्होंने सिर्फ कर्तव्य करने के ही विचार नहीं दिए अपितु खुद के जीवन में भी लागू करने का प्रयास किया।

गांधी जी के कर्तव्य चिंतन के संबंध में कहा जाता है कि, "गांधी जी ब्रिटिश आदर्शवादी विचारक टी.एच.ग्रीन. की विचारधारा से प्रभावित थे। ग्रीन की तरह गांधी जी ने भी राजनैतिक दायित्व की समस्या का गहन

---

[103] रामरतन, शोभिका शारदा, गांधी जी की राजनैतिक अवधारणायें, pg. no.11

[104] (127- भारतीय राजनीतिक विचारक, रश्मि पाठक)

अध्ययन किया था, और जो गांधी जी ने व्याख्या की वो ग्रीन की व्याख्या से व्यापक थी। ग्रीन की तरह गांधी जी भी यही मानते थे कि राजनैतिक दायित्व से अभिप्राय शासक तथा शासित अथवा राज्य तथा नागरिकों के परस्पर संबंधों से है। राजनैतिक दायित्व की प्रमुख उद्देश्य राज्य और नागरिकों के परस्पर संबंधों को न्यायोचित, सदोपयोगी तथा मधुर बनाने की है।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध हेतु गांधी जी से संबंधित विभिन्न ग्रंथों, विचारों और पत्र-पत्रिकाओं का अध्ययन किया गया। अंततः प्रस्तुत शोध प्रश्न 'गांधी चिंतन आलोक में संविधान का समाकलन' के सन्दर्भ में कहा जा सकता है कि भारतीय संविधान पर महात्मा गांधी जी के चिंतन का संतुलित प्रभाव पड़ा है। भारतीय संस्कृति में सहमति पद्धति का प्रमुख स्थान है। जो लोकतांत्रिक मूल्यों, प्रक्रियाओं से बहुत भिन्न है। लोकतंत्र के बहुमत और अल्पमत के अंतर्गत कई असामान्य गतिविधियाँ की जाती हैं जो लोकतंत्र की अवधारणा को क्षति पहुंचाती हैं।

इसलिए भारतीय परंपरा में पंच-परमेश्वर की अवधारणा पर टिकी सहमति की परंपरा को महत्वपूर्ण स्थान दिये हुए है। जबकि आधुनिक लोकतंत्र की व्यावहारिकता छल, प्रपंच, धनबल, बहुबल से भरी हुई है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि भारतीय लोकतंत्र पूर्णतया व्यर्थ है। कहने का तात्पर्य है कि संविधान निर्माण की प्रक्रिया सहमति से चली है और आगे सहमति को ही व्यवस्था की नींव बनाये रखने का प्रयास किया गया है।

यदि भारतीय संविधान की निर्माण प्रक्रिया का आधार सहमति माना गया तो इसका तात्पर्य नहीं है कि संविधान सभा में वैचारिक भिन्नता का अभाव था। वैचारिक भिन्नता होने के बावजूद संविधान निर्माण प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न नहीं किया गया। गांधी जी के विचार से व्यावहारिकता प्राप्त करते हुए संविधान का आधार सहमति को ही बनाया गया।

संविधान में गांधी जी के चिंतन का अध्ययन करने के पश्चात् प्राप्त हुआ कि भारतीय संविधान गांधी जी के विचार को, आदर्श को, स्वराज को, उनके सपने के भारत को संविधान तथा राज्य का उद्देश्य बनाया पर उस उद्देश्य के साधन के रूप में विश्व के विभिन्न देशों के अनुभव और संविधान रहे हैं। जिसमें कई साधन ऐसे हैं जिनका विरोध गांधी जी ने प्रत्यक्ष तौर पर की है। उदाहरण एक तौर पर गांधी जी का 'मेनिफेस्टों' कहा जाने वाला ग्रन्थ 'हिन्द स्वराज' में संसदीय जनतंत्र को गांधी जी वेश्या और बाँझ औरत जैसे शब्द नवाजिश करते हैं। इसी को संविधान शासन संचालन, और स्वराज के साधन के रूप में स्वीकार किया है।

राज्य का उद्देश्य और राज्य एक कार्य करने की क्रिया विधि को निर्धारित करने वाली राज्य के नीति निदेशक तत्व आयरलैंड के संविधान से ग्रहित है। राज्य को उद्देश्य और साधन बताने वाली यह तत्व खुद उद्देश्य

प्राप्ति का साधन है। इससे स्पष्ट है कि संविधान को गांधी जी के चिंतन को राज्य का उद्देश्य तो बनाया पर साधन के चयन में परिस्थितिवश समझौता करना पड़ा है।

संविधान ने कई स्तर पर विकेंद्रीकृत व्यवस्था देने का प्रयास किया है। संविधान ने संघात्मक व्यवस्था को स्वीकार किया है जो प्रत्येक राज्य को उनकी शक्ति मुहैया कराती है। हालाँकि भारतीय शासन व्यवस्था के बारे में कहा जाता है कि इसकी आत्मा एकात्मक है, पर यह अंतिम सत्य नहीं है। संविधान ने गांधी जी के कई विचार को विचारित करके संविधान में महत्वपूर्ण स्थान दिए हुए है। राज्य और संविधान की प्रक्रिया और उद्देश्य बताने वाली प्रक्रिया राज्य के नीति निदेशक तत्व उन सभी बातों का जिक्र किया है जो गांधी जी के विचारों से प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष तौर पर संबंध रखते थे।

भारतीय संविधान की प्रस्तावना में ही उन सभी मूल्यों को चयनित किया गया है जो आदर्श राज्य के लिए आवश्यक था। जिस कारण भारतीय संविधान ने राज्य के लोककल्याणकारी स्वरुप को अपनाया है। जिसमें राज्य सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास करेगा। यह राज्य के अन्दर लोककल्याण की प्रवृत्ति गांधी जी के चिंतन से संचारित होता है। क्योंकि गांधी जी समाज के अन्दर प्रत्येक दृष्टिकोण से समरूपता देखने का विचार रखते थे। संविधान द्वारा उन्हीं के विचार को हस्ताक्षरित करने का प्रयास किया जा रहा है।

गांधी जी के सर्वोदयी राज्य के लक्ष्य को लोककल्याण के माध्यम से पाने का प्रयास किया जा रहा है। लोककल्याण की स्थापना के बाद देश के नागरिकों के जीवन स्तर में काफी सकारात्मक परिवर्तन आया है। राष्ट्र के विभिन्न क्षेत्रों के लोगों में मानसिक रूप से सहभागिता और उत्तरदायित्व का विकास हो रहा है। संविधान के द्वारा गांधी जी के चिंतन को अप्रत्यक्ष तौर पर स्वीकृति लोगों में संतोष बनाये रखने में महत्वपूर्ण कारक साबित हो रहा है।

भारतीय संविधान निर्माण प्रक्रिया के दौरान भारत में सांप्रदायिक स्थिति बहुत ही भयावह थी। उसी दौर में भारत के विभाजन हुआ, विभाजन एक स्वरुप मुसलमानों के लिए पाकिस्तान, और हिन्दुओं के लिये भारत था। मगर गांधी जी सहृदयता के कारण इस्लाम अनुयायियों ससम्मान भारत में बने रहने की स्वतंत्रता प्रदान की गई। गांधी जी की इसी सहृदयता को संविधान अपनी प्रक्रिया और उद्देश्य में संजोये रखने का प्रयास किया है।

संविधान साम्प्रदायिक विभेद ना करते हुए भारत को एक पंथनिरपेक्ष राज्य का स्वरुप दिया है। भारत के पंथनिरपेक्ष राज्य के स्वरुप में गांधी जी का चिन्तन अप्रत्यक्ष रूप में बहुत ही महत्वपूर्ण रहा है।

भारतीय संविधान और गाँधी जी के सपनों का भारत का उद्देश्य है कि भारत में समता आधारित न्याय स्थापित हो। माना जाता है कि सामाजिक लोकतंत्र के अभाव में राजनीतिक लोकतंत्र व्यर्थ है। इसीलिए संविधान सभा गांधी जी के व्यावहारिक चिंतन से आलोकित होकर सामाजिक न्याय व्यवस्था स्थापित करने का प्रयास किया है। भारतीय संविधान सामाजिक न्याय की स्थापना हेतू नागरिक अधिकार और राज्य के नीति निदेशक तत्व की व्यवस्था करता है। जिसमें क्षेत्र, जाति, लिंग, वर्ग, भाषा, नस्ल, वंश आदि के आधार पर विभेद की मनाही है। भारतीय संविधान इसके विरुद्ध जाने वालों के लिए दंडात्मक प्रक्रिया का प्रावधान किया है।

जबकि नीति निदेशक तत्व में राज्य को निर्देश दिया गया है कि राज्य लोककल्याण की प्रक्रिया अपनाकर सामाजिक और आर्थिक विभेद को समाप्त कर सकता है। नागरिक अधिकार और राज्य के नीति निदेशक तत्व सामाजिक न्याय के महत्वपूर्ण साधन है।

भारतीय संविधान गांधी जी के चिंतन से ग्राही होकर विश्व बंधुता और राष्ट्रीय एकता को लक्ष्य बनाने का प्रयास किया है। यह लक्ष्य भारतीय संविधान के उद्देश्यिका में संगृहीत किया गया है। विश्व बंधुत्व की अवधारणा को साकारित करने के लिए राज्य के नीति निदेशक तत्व के माध्यम से राज्य को निर्देशित किया गया है।

इस सब मूल्यों के अतिरिक्त संविधान ने गांधी जी के महत्वपूर्ण मान्यताओं को शामिल किया है। संविधान ने पंचायती राज को सुदृढ़ करने की जिम्मेवारी स्वीकार किया है। संविधान लघु, कुटीर उद्योगों, धंधों को प्रोत्साहित करेगा जिससे विकेंद्रीकरण की स्थापना साकारित हो पायेगा। गांधी जी के अन्य मूल्य जिसे संविधान ने ग्रहित किया वो मूल्य मद्य निषेध, और लोकतान्त्रिक विकेंद्रीकरण को शामिल किया गया है।

ये सभी मूल्य राज्य की शासन प्रक्रिया के उद्देश्य है। इन उद्देश्यों को प्राप्त करना शासन के सभी शाखाओं, विधि, संविधान, संवैधानिक प्रक्रियाओं आदि का उद्देश्य है। ये उद्देश्य न्याय, बंधुता, सुख, समृद्धि, स्वतंत्रता, समानता, और व्यक्ति की गरिमा जो व्यक्ति के जीवन में गुणवत्ता बढ़ाने वाले है। इसलिए संविधान में शामिल किये गए है।

प्रस्तुत शोध हेतु अध्ययन किये गए ग्रंथों से स्पष्ट होता है कि संविधान को यदि उद्देश्य की दृष्टिकोण से देखा जाए तो गांधी जी के चिंतन को संविधान संविधान का उद्देश्य बनाया गया है। पर यदि साधन की दृष्टिकोण से देखा जाए तो संविधान पर गांधी जी चिंतन की छाप निम्न है। क्योंकि भारत का संविधान शासन संचालन हेतु उन साधनों को ला रहा है जो विश्व के अन्य देश के अनुभव है। जबकि गांधी जी चिंतन मूल साधनों की पवित्रता रही है। गांधी जी आस्था संसदीय जनतंत्र में नहीं थी और न ही लोकतंत्रीय प्रणाली के मतदान प्रक्रिया में।

गांधी जी की राय थी की केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति हिंसा की तरफ ले जाती है। सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, विकेंद्रीकरण की प्रवृत्ति बताती है कि समाज में स्वराज, सहभागिता, आत्मनिर्भरता को स्थायित्व प्राप्त होगी। बावजूद इसके राज्य के द्वारा केंद्रीकृत विकास की अवधारणा अपनायी गई। जिसका परिणाम हुआ कि आज भारतीय समाज में बेरोजगारी, हिंसा, असमानता, नशा, पर्यावरण प्रदुषण, असंतोष परिव्याप्त हुआ है।

गाँधी जी के विचारों को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से सम्मिलित करने के लिए कुछ संविधान में संशोधन किये गए है। जो इस प्रकार है कि

8वें संशोधन में अनुसूचित जाति, जनजातियों एवं एन्लोइन्डियन के लिए आरक्षण की अवधि में वृद्धि।

25वें संशोधन में राज्य के नीति निदेशक तत्वों को जनहित में प्रभावशाली बनाये जाने हेतु संशोधन किया गया।

- 26 वें संशोधन में प्रिवी पर्सो को समाप्त किया गया।
- 29 वें संशोधन में केरल भूमि सुधार को नौवीं सूची में शामिल किया गया।
- 42 वें संशोधन में संविधान की प्रस्तावना में 'समाजवाद' और 'पंथनिरपेक्ष' शब्द जोड़े गए।
- 44 वें संशोधन में संपत्ति का अधिकार मौलिक अधिकार से निकाला गया।
- 47 वें संशोधन में भूमि सुधार को नौवी सूची में शामिल किया गया।
- 61 वें संशोधन में मतदान करने की आयु 21 से 18 निर्धारित कर दी गई।
- 65 वें संशोधन में अनुसूचित जाति, एवं जनजातियों के हित के लिए राष्ट्रीय आयोग की स्थापना की गई।

- 73 वें संशोधन में संविधान में एक नया भाग 9 तथा एक नई अनुसूची ग्यारहवीं अनुसूची जोड़ी गई और पंचायती राज व्यवस्था को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया। और अनुसूचित जाति, एवं जनजातियों के लिए पंचायतों में 1/3 आरक्षण का प्रावधान किया गया।
- 77 वें संशोधन में अनुसूचित जाति, एवं जनजातियों के लिए पदोन्नति में आरक्षण की व्यवस्था किया गया।
- **93** वें संशोधन में शिक्षा संस्थानों में अनुसूचित जाति/ जनजाति और अन्य पिछड़े वर्गों के नागरिकों के दाखिले के लिए सीटों के आरक्षण की व्यवस्था, संविधान के अनुच्छेद 15 की धारा 4 के प्रावधानों के तहत की गई है।

स्वाधीनता के लगभग 70 वर्ष के बाद और इस प्रकार के संशोधनों के बावजूद हमें वह स्वराज प्राप्त नहीं हो पाया जिसका हमें इंतज़ार था। संविधान ने गांधी जी को नकार संसदीय स्वरुप को स्वीकार किया है। हमें वह प्राप्त नहीं हुआ जिसकी हमें आवश्यकता थी। गांधी जी ने कहाँ था कि, "जब मै नहीं रहूँगा, जवाहरलाल मेरी भाषा बोलेंगे और वह मेरे उत्तराधिकारी है।" लेकिन दोनों में वैचारिक मतभेद था जिसका प्रभाव भारत के संविधान और भविष्य पर पड़ा।

स्वतंत्रता के इतने वर्षों के बाद भी जो कुछ हुआ है उससे कहीं अधिक शेष है। जिस अपेक्षा से संविधान निर्माताओं ने संविधान में प्रस्तावना, नागरिक अधिकारों और राज्य के नीति निदेशक को शामिल किया था उस अपेक्षा पर अभी तक खरा नहीं उतर पाया है।

भारतीय राज्य व्यवस्था की व्यावहारिकता में कहा जा सकता है कि उत्तम भावना के साथ उत्तम सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक परिस्थितियों का निर्माण किया जाना चाहिए। विगत कुछ वर्षों में जितना भी विकास हुआ है उसे हम नजरअंदाज नहीं कर सकते हैं। गरीब और अमीर के मध्य दुरी आयी है। धन के लिए भयंकर प्रतिस्पर्धा, पुलिस और सैन्य क्षेत्र में भारी व्यय हो रहा है। शहरीकरण के कारण ग्रामीण मूल्य और संस्कृति का पतन हुआ है, बेरोजगारी, असमानता, एवं सामाजिक विकृति को बढ़ावा मिला है।

संविधान की सामाजिक उद्देश्य की पूर्ति को देखा जाए तो सामाजिक न्याय के द्वारा जन सशक्तिकरण नहीं हो पाया है। संविधान निर्माताओं की भावना धर्म, जाति के भावना से उठकर सभी साधन विहीन, आर्थिक,

शैक्षणिक दृष्टियों से पिछड़े वर्गों को राष्ट्रीय मुख्यधारा से जोड़ने की रही है। यह कार्य अधुरा ही छूटा है जिस कारण समाज में सामाजिक हिंसा की घटनाएँ दिखायी देती है।

जैसा कि पहले उल्लेखित किया जा चूका है कि संविधान की प्रस्तावना, मौलिक अधिकार, राज्य के नीति निदेशक तत्व में अनेक समस्यओं के समाधान निहित है। इन सब में से किसी एक को कार्यरूप में परिणित कर दिया जाए तो देश की कायापलट हो जाए। पर जैसे लघु, कुटीर उद्योग उद्योग के विकास के लिए बहुत से प्रावधान किये गए है जिनकी क्रियान्विति तो दूर बल्कि इसके बिपरीत आचरण व्यवहार में लाया जा रहा है।

जैसे कि प्रस्तुत शोध पत्र का अध्ययन करने का उद्देश्य रहा है कि भविष्य में जब कभी संविधान की पुनर्संरचना हो या संविधान संशोधन हो तो गांधी जी के मूल्यों से आदर्श प्राप्त किया जाए। जिससे भावी समाज स्वराज से परिपूर्ण हो। भारतीय संविधान उन उद्देश्यों को पूरा नहीं कर जो उससे अपेक्षा थी। जबकि सामाजिक परिवर्तन की वजह से कई और अपेक्षाएं जुड़ गई है जो उसके और देश के लिए चुनौती पूर्ण है।

संविधान के समक्ष कुछ व्यावहारिक चुनौती है जो उसकी ही प्रासंगिकता प्रश्नचिन्ह उठाते फिरते है। संविधान को गरीब भारत में होने वाले चुनावों में किये जाने वाले व्यय को रोकने का प्रयास करना चाहिए। क्योंकि इससे लोकतंत्र के भविष्य को खतरा दिखाई देता है। भारत में होने वाले इतने अधिक चुनाव राष्ट्रीय आय के लिए संकट का कार्य करते है। बावजूद इसके भारतीय राजनीति में दलबदल, अवसरवादिता, जनहित के प्रति उदासीनता, भ्रष्टाचार, जैसी आदि बाधाएं है जो लोकतंत्र की वास्तविकता को छिपाए हुए है। इसलिए संविधान को भविष्य के लिए इन प्रश्नों पर गहनता से विचार करने की आवश्यकता है।

भारतीय राजनीति में राजनैतिक अस्थिरता भी लोकतंत्र की विफलता का बड़ा कारक है। 1967 के बाद अस्थिर सरकारों का दौर शुरू हुआ जिस कारण हमारा संसदीय ढांचा निष्क्रिय, और अप्रभावी साबित हुआ है। इसी दौर से ही आम चुनावों से निर्वाचित प्रतिनिधियों की गुणवत्ता में निरंतर ह्रास हुआ है। इस सन्दर्भ में भी संविधान और संसदीय प्रणाली को विचार करने की आवश्यकता है।

भारतीय राजनीति की भयावह व्यावहारिकता से संविधान और सामान्य जन को रूबरू होने की आवश्यकता है। वास्तविकता यह है कि वर्तमान भारतीय शासन का संचालन लोकतंत्र से नहीं अपितु माफियाओं से हो रहा है। एन.एन.वोहरा के द्वारा राजनीति के अपराधीकरण के सन्दर्भ में सौंपे गए रिपोर्ट के अनुसार, "माफिया

वस्तुतः समान्तर सरकार चला रहा है। राज्यतंत्र निरर्थक हो गया है, अपराधी एवं सशस्त्र गुटों, तस्करों एवं आर्थिक मामलों के अपराधियों ने, नौकरशाहों, जनप्रतिनिधियों और एवं अन्य प्रभावशाली व्यक्तियों से प्रत्येक स्तर पर संबंध स्थापित कर लिए है। इनके अन्तर्राष्ट्रीय पर भी संबंध स्थापित है। कालेधन और हवाला लेन-देन के आधार पर एक समान्तर अर्थव्यवस्था का निर्माण हो चूका है जो देश के अर्थ तंत्र को नष्ट कर रही है। इन शक्तिशाली व्यक्तियों से लड़ने में पुलिस तंत्र अपने को असमर्थ पाता है। यहाँ तक न्याय व्यवस्था भी माफिया के प्रभाव से पूर्णतया मुक्त नहीं है।" ये रिपोर्ट भारतीय राजनीति की व्यावहारिकता को शब्दशः व्याख्यायित करते है।

इस चिंतनीय रिपोर्ट को संज्ञान में लेकर संविधान को युक्तियुक्त समाधान निकालना चाहिए स्वराज ही न सही अर्थों आजादी प्राप्त हो पाए।

भारतीय संविधान को गरीबी की भयावह स्थिति से लड़ने का उपाय खोजना चाहिए। समाजवाद के करीब जाकर संसाधनों का उचित बंटवारा करना चाहिए। जल्द से जल्द न्याय प्राप्त हो इसका भी प्रावधान करना चाहिए। सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन में गति प्रदान करना चाहिए। महिलाओं के संबंध में या उनके सशक्तिकरण करने के लिए व्यापक पहल करनी चाहिए।

भारत में व्याप्त इस प्रकार की समस्या से निपटना संविधान की प्राथमिकता होनी चाहिए। वैसे भारत में कई बार यह बात उठाया गया कि भारतीय संविधान की पुनर्व्याख्या या पुनर्संरचना करना चाहिए। लेकिन भारतीय संविधान का अध्ययन करने के पश्चात् प्राप्त हुआ कि अभी पुनर्व्याख्या या पुनर्संरचना की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि भारतीय संविधान में कठोरता और लचीलेपन मिश्रण खुद को बदलती परिस्थितियों में ढाल लेता है। जिस कारण संविधान लागू होने के पश्चात् से कई महत्वपूर्ण संशोधन हुए है। जो इसकी गतिशीलता और परिवर्तित स्वरुप होने का स्पष्टीकरण देता है। इसलिए पुनर्व्याख्या या पुनर्संरचना जैसे बड़े परिवर्तन को रोके है।

भारत के समाज को उत्तम बनाने के लिए भविष्य में गांधी जी के मार्ग को चुनना होगा। गांधी जी के चिंतन को कुछ हद तक स्वीकार किया गया है पर बहुत शेष है। ये हो सकता है कि गांधी जी के चिन्तन में भौतिकतावाद, दिखावा कम हो पर जो भी होगा उस पर उम्मीद किया जा सकता है कि सतही, व्यापक, स्थायी, वास्तविक, समाज के लिए स्वास्थ्यवर्धक होगा।

संदर्भ-ग्रंथ सूची

(क). आधार ग्रंथ:

भारत का संविधान. 2011. इलाहाबाद: सेंट्रल लॉ एजेंसी.

(ख). सहायक ग्रंथ:

(1) रोला, रोमा . 2008, महात्मा गांधी: जीवन और दर्शन, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

(2) मशरुवाला, घ. किशोरलाल, 2008, गांधी: विचार-दोहन, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली

(3) गंगराडे, के. डी., 2006, गांधी के आदर्श और ग्रामीण विकास, राधा पब्लिकेशन्स, दिल्ली

(4) मोदी नृपेन्द्र प्रसाद, 2007, गांधी-दृष्टि , मानक पब्लिकेशन्स, दिल्ली

(5) गांधी महात्मा, 2008, मेरे सपनों का भारत, नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद

(6) पाण्डेय. एन. बी. 1994, गांधी समग्र चिंतन, गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, अशोक प्रिंटिग प्रेस, दिल्ली

(7) गांधी जी, 2007, सर्वोदय, जितेंद्र ठाकोर भाई देशाई, नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद

(8) गांधी. क. मो., 1996, गांधी जी की अपेक्षा, नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद

(9) सिन्हा मनोज, 2010, गांधी अध्ययन, ओरियंट ब्लैक स्वान प्रा. लि.

(10) चंद्र सुधीर, 2011, गांधी एक असंभव संभवना, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. नई दिल्ली

(11) सिंह,मनोज कुमार, चौधरी शैलेश कुमार, भारतीय राजनीतिक चिंतक: महात्मा गांधी

(12) कश्यप सुभाष, 2008, हमारा संविधान: भारत का संविधान और संवैधानिक विधि, नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया, दिल्ली

(13) कुमार हरीश, 2010, गांधी: सामाजिक राजनीतिक परिवर्तन, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली

(14) गांधी जी 2014, रचनात्मक कार्यक्रम: उसका रहस्य और स्थान, विवेक जितेंद्र देशाई, नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद

(15) गांधी जी, 2014, मंगल प्रभात, विवेक जितेंद्र देशाई, नवजीवन मुद्रणालय अहमदाबाद

(16) कमल. के एल. 2007, भारतीय संविधान की पुनर्संरचना, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर

(17) प्रभु. आर. के., राव यू. आर., 2010, महात्मा गांधी के विचार, नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया, दिल्ली

(18) मंगलानी रूपा, 2015, भारतीय शासन एवं राजनीति, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर

(19) रतन राम,शोभिका शारदा, 1992, महात्मा गांधी की राजनैतिक अवधारणाएँ, कलिंगा पब्लिकेशन्स, दिल्ली

(20) फड़िया. बी. एल., 2006, अंतरराष्ट्रीय राजनीति: सिध्दांत एवं समकालीन राजनीतिक मुद्दे, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा

(21) पाण्डेय जय नारायण, 2011, भारत का संविधान, सेंट्रल ला एजेंसी, इलाहाबाद

(22) बसु दुर्गा दास, 2011, भारत का संविधान: एक परिचय, LexisNexis Butterworths, Wardha Nagpur

<u>वितान पटल लिंक</u>

(23) http://rajasthangyan.com/notes_explain.jsp?tid=2&nid=2

(24) http://vle.du.ac.in/mod/book/print.php?id=12126&chapterid=24538

(25) (http://mhrd.gov.in/hi/rte-hindi)